चकमक

दिसम्बर, 1997 बाल विज्ञान पत्रिका रु. 7.00

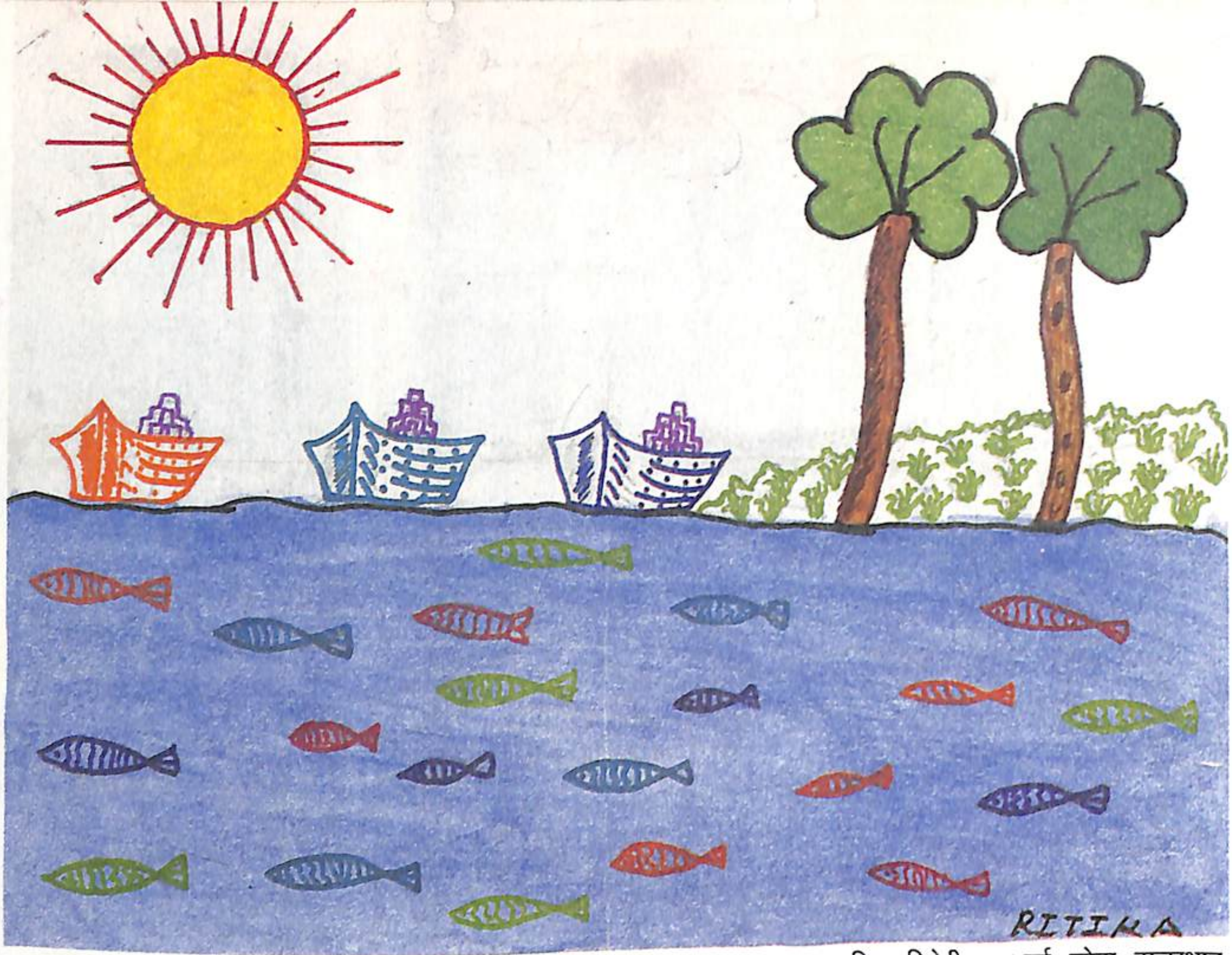

ऋतिका त्रिवेदी, दस वर्ष, कोटा, राजस्थान

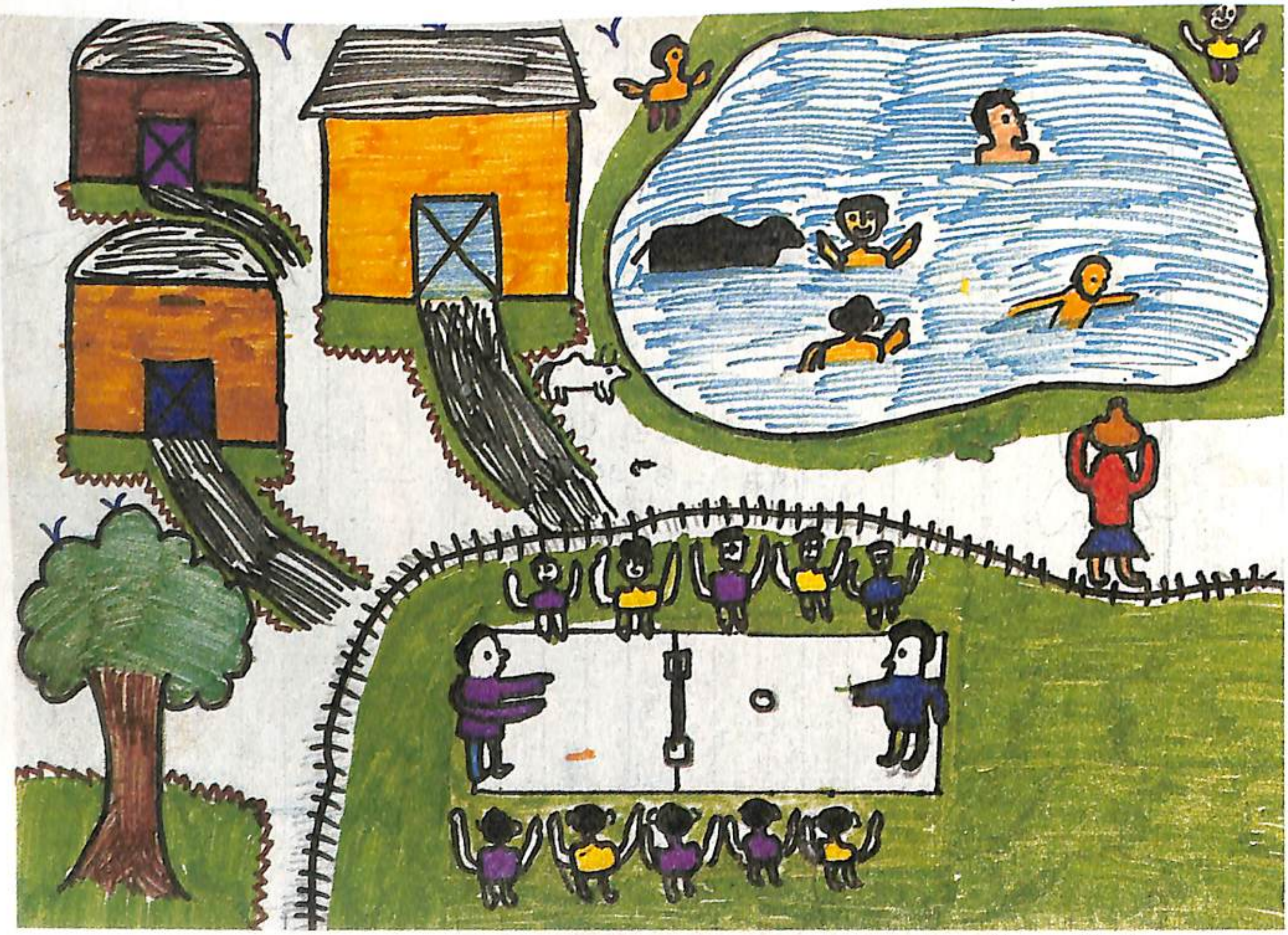

अरुण जॉनू, छठवीं, झुँझुनू, राजस्थान

चकमक

मासिक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष-13 अंक-6 दिसम्बर, 1997

सम्पादन
विनोद रायना
राजेश उत्साही
कविता सुरेश
टुलटुल विश्वास

कला-सज्जा
जया विवेक

विज्ञान परामर्श
सुशील जोशी

वितरण
कमल सिंह, मनोज निगम, अशोक रोकड़े

चकमक का चंदा

एक प्रति	सात रुपए
छमाही	40.00 रुपए
वार्षिक	75.00 रुपए
दो साल	140.00 रुपए
तीन साल	200.00 रुपए
आजीवन	750.00 रुपए

साथ में आपके किसी मित्र या परिचित को एक साल की मुफ़्त सदस्यता।

आजीवन : 1000.00 रुपए
साथ में एकलव्य के सभी प्रकाशनों की एक-एक प्रति पर 50% छूट।

सभी में डाक खर्च हमारा

चंदा, मनीआर्डर/ड्राफ़्ट/चेक से **एकलव्य** के नाम पर भेजें। भोपाल से बाहर के चेक में बैंक चार्ज 15.00 रुपए अतिरिक्त जोड़ें।

कागज़ : यूनिसेफ़ के सौजन्य से।

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता

एकलव्य,
ई -1/25,
अरेरा कॉलोनी,
भोपाल-462 016
(म.प्र.)
फोन : 563380

विशाल गुप्ता, सिरसी, धार, म.प्र.

148 वें अंक में ...

विशेष

5 ❑ ओह! यह ठण्ड

कविताएँ

10 ❑ ख़ब्रें ठण्डी
19 ❑ जीवन जाता यहीं ठहर
20 ❑ काँप रहे सब थर-थर
34 ❑ पेड़ का सुख

कहानी

26 ❑ पूस की रात

धारावाहिक

37 ❑ क़िस्सा बुरातीनो का : 19

हर बार की तरह

2 ❑ इस बार की बात
14 ❑ खेल काग़ज़ का : फूल
24 ❑ माथा पच्ची
36 ❑ वर्ग पहेली : 78
मेरा पन्ना पृष्ठ 8, 9, 18, 22 एवं 23 पर

और यह भी

11 ❑ भूली बिसरी यादें : 2
17 ❑ क्या सोचते हो तुम?
20 ❑ नए वर्ष का कैलेंडर
32 ❑ तुम भी बनाओ : चटाईयाँ

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यावसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

इस बार की बात .....

दिसंम्बर का महीना यानि कड़ाके की ठण्ड का महीना। तुम्हारी पढ़ाई का आधा साल पूरा होने का महीना। छमाही परीक्षा और छुट्टियों का महीना। और इस सबके अलावा तुम में से हर एक के लिए कुछ अलग तरह का भी होगा यह महीना। कुछ के लिए अच्छी यादों का, तो कुछ के लिए दुख भरी यादों का होगा यह महीना।

जैसे दिसम्बर 1984 में हुआ भोपाल गैस काण्ड और दिसम्बर, 1992 में हुए साम्प्रदायिक दंगे सभी के लिए दुख भरी यादों से भरे हैं। भोपाल गैस काण्ड जैसी घटनाएँ फिर कभी न हों इसलिए उसे याद रखना ज़रूरी है। क्योंकि, जब हम दुख देने वाली बातों को याद रखते हैं तब उससे बचने के उपाय भी ढूँढ्ते रहते हैं। दंगों में हुए नुकसान को कभी भी भुलाया नहीं जा सकता है। इन्सान का इन्सान से लड़ना झगड़ना, वो भी मज़हब या सम्प्रदाय के नाम पर, क्या ठीक है? तुममें से जिन्होंने दंगों को देखा-भुगता है वे जानते हैं कि धर्म और जात के नाम पर आदमी आदमी का ही ख़ून बहाता है। ऐसे ही माहौल में हमें अपने आसपास कुछ ऐसी मिसालें भी मिलती हैं जहाँ किसी एक सम्प्रदाय के व्यक्ति या परिवार ने दूसरे सम्प्रदाय या मज़हब के व्यक्ति या परिवार को बचाया हो या अपने घर में छिपाया हो। इस तरह के कितने ही क़िस्से सुनने में आते हैं। फिर एक सवाल उठता है कि इस धर्म और जात के कारण होने वाली मारकाट से फ़ायदा किसको होता है। इन सब पर सोचो और ज़रूर सोचना क्योंकि ये बातें हम सबके जीवन से जुड़ी हैं।

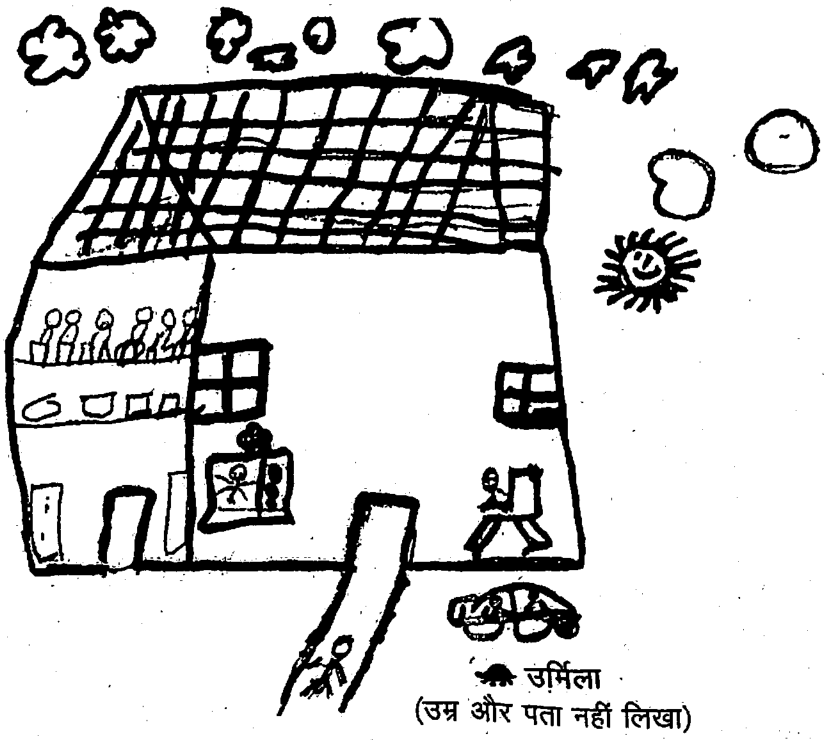

उर्मिला
(उम्र और पता नहीं लिखा)

इस अंक में तुम पढ़ोगे ठण्ड के बारे में, शहीद वीर नारायण सिंह के बारे में और फिर मिलोगे भूत से। भूत का नाम सुनकर तुम डर तो नहीं गए? ख़ैर इसके विषय में तुम अन्दर के पन्नों पर पढ़ना। यहाँ हम तुम सबसे विदा लेते हैं। एक साल बाद मिलेंगे, मतलब जनवरी, 1998 में।

● चकमक

अमनदीप अरोरा, पाँचवीं, नरसिंहपुर, म.प्र.

भाग्यश्री जोशी, धार, म. प्र.

तृप्ती बमिक, छठवीं, उज्जैन, म. प्र.

यहाँ से काट दें

चकमक

सदस्यता फॉर्म

मुझे/हमें निम्न पते पर

माह .... से चकमक

भेजना शुरू करें–

नाम ....

मोहल्ला ....

डाकघर ....

ज़िला ....

पिन ☐☐☐☐☐☐

सदस्यता शुल्क रु. ....

.... माह/वर्ष

के लिए मनीआर्डर/ड्राफ्ट/चेक से भेज रहे हैं।

नाम एवं हस्ताक्षर

सदस्यता दरें

छह माह	:	40.00 रुपए
एक साल	:	75.00 रुपए
दो साल	:	140.00 रुपए
तीन साल	:	200.00 रुपए
आजीवन	:	750.00 रुपए *
आजीवन	:	1000.00 रुपए ◦

* इस सदस्यता पर आपके किसी मित्र को साल भर चकमक का उपहार

◦ इस सदस्यता पर एकलव्य के सभी प्रकाशनों की एक प्रति पर 50% की छूट

सदस्यता शुल्क मनीऑर्डर/ड्राफ्ट/चेक से '**एकलव्य**' के नाम में इस पते पर भेजें –

एकलव्य, ई–1/25, अरेरा कॉलोनी, भोपाल 462 016 (म. प्र.)

भोपाल से बाहर के चेक से शुल्क भेजते समय कृपया 15.00 रुपए बैंक चार्ज अतिरिक्त जोड़ें।

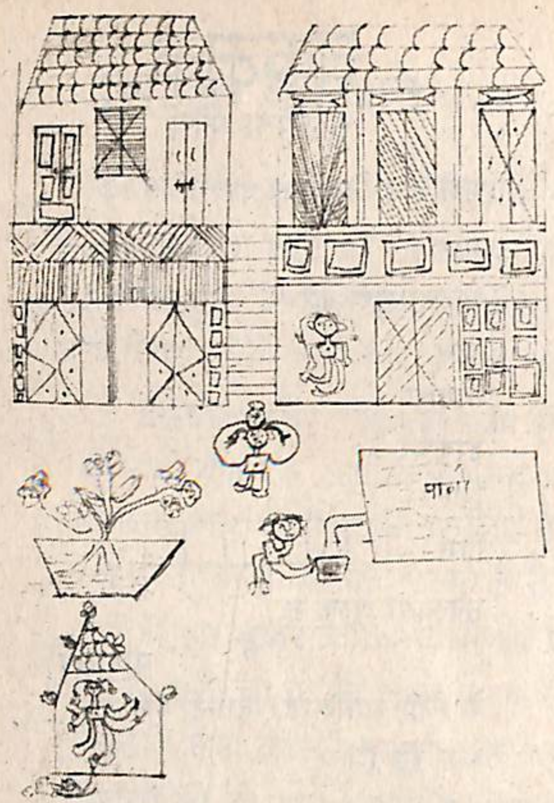

संगीता गुर्जर, आठवीं, टिमरनी, होशंगाबाद, म.प्र.

यहाँ से काट लें

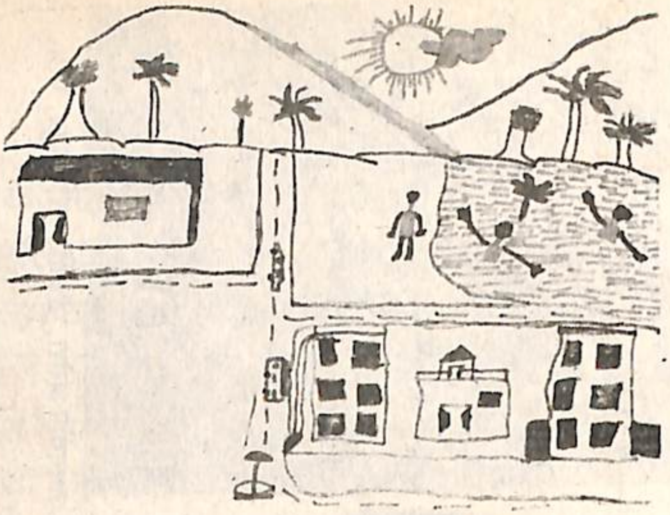

विवेक महला, सातवीं, झुंझुनु, राजस्थान

इस चित्र को बनाने वाले ने अपना नाम, पता नहीं लिखा

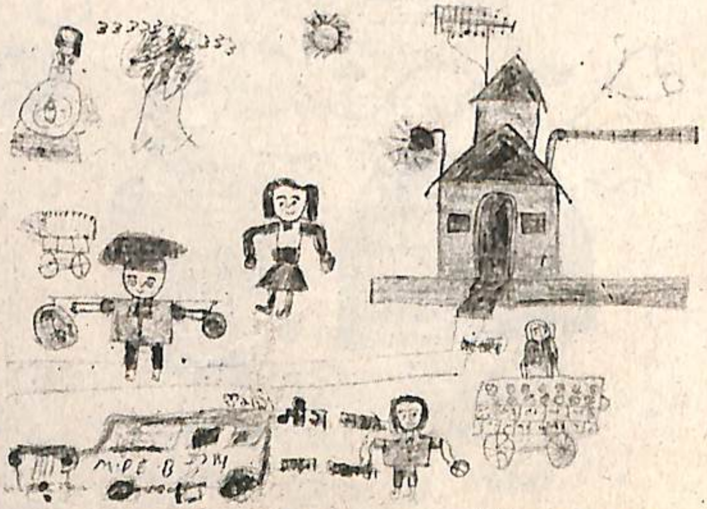

मीरा सराठे, सातवीं, हिरणखेड़ा, होशंगाबाद, म.प्र.

चकमक का उपहार

अगर आप चकमक का सदस्यता शुल्क भेज रहे हैं तो अपने किसी ऐसे परिचित/दोस्त/परिवारजन का पता यहाँ लिखें जिसे आप चकमक से परिचित कराना चाहते हों या चकमक का उपहार देना चाहते हों। हम उन्हें चकमक का एक अंक उपहार में भेजेंगे।

नाम ....

....

मोहल्ला ....

डाकघर ....

ज़िला ....

पिन ☐☐☐☐☐☐

....

....

ओह! यह ठण्ड

❑ टुलटुल विश्वास

शायरों ने ठण्ड के मौसम को कई उपमाएँ दी हैं - 'गुलाबी ठण्ड, रूमानी ठण्ड, जाड़ों की नर्म धूप', और न जाने क्या-क्या। लेकिन हमारे तो ठण्ड के नाम से ही हाथ-पाँव ठण्डे पड़ जाते हैं। जो चीज़ देखो वही ठण्डी हो जाती है। हवा ठण्डी, पानी ठण्डा, ज़मीन ठण्डी, यहाँ तक कि अपनी ही नाक भी बिलकुल ठण्डी! ऐसे मौसम में कोई काम न करना पड़े तो कैसा रहे? न सुबह-सुबह उठना पड़े, न स्कूल जाना पड़े, न ठण्ड से ठिठुरे हाथों पर गुरूजी की मार खानी पड़े। और सबसे बड़ी बात, नहाना न पड़े। पर ऐसा होता कहाँ है? हमारी अम्मा तो कतई नहीं करने देतीं ऐसा कुछ भी। सुबह-सुबह उठा देती हैं और नहाने से जी चुराओ तो वो डाँट पड़ती है, वो डाँट पड़ती है कि बस पसीना आ जाता है। नहाते समय, पहला मग्गा पानी का डालने में, हमारी तो समझो जान ही निकल जाती है।

पर क्यों लगती है हमें ठण्ड? क्या ऐसा नहीं हो सकता कि बाहर चाहे मौसम कितना ही ठण्डा या कितना ही गर्म क्यों न हो, हम मज़े से वैसे के वैसे ही रहें? पर ऐसा होता नहीं है। और वह इसीलिए क्योंकि हम वास्तव में वैसे के वैसे ही रहते हैं। यानी हम इन्सानों के शरीर का तापमान मौसम के साथ घटता या बढ़ता नहीं है, स्थिर रहता है। हाँ, बाक़ी स्तनधारी जीव और पक्षी भी इसी तरह के हैं। यानी उन्हें भी जाड़ों में ठण्ड और गर्मियों में गर्मी लगती है। इन सब जीवों को समतापी (एक ही या समान तापमान वाले) जीव कहा जाता है।

दरअसल वातावरण का तापमान चाहे कितना भी ठण्डा या कितना भी गर्म क्यों न हो जाए, समतापी जीवों के शरीर का आंतरिक तापमान एक निश्चित तापमान के इर्द-गिर्द ही बना रहता है। लेकिन जब हमारे शरीर और वातावरण के सामान्य तापमान के बीच का अन्तर बढ़ता है, तब हमें ठण्ड या गर्मी महसूस होने लगती है।

ऊपर हमने शरीर के आंतरिक तापमान की बात की थी। आंतरिक हिस्सा यानी वह भाग जहाँ मस्तिष्क, दिल, फेफड़े, पाचन तंत्र आदि अंग हैं। अगर ये अंग एक लगभग निश्चित तापमान पर नहीं रखे जाएँ तो ठीक से काम नहीं कर पाते हैं। जबकि हाथ-पैर के बाहरी हिस्से तापमान का उतार-चढ़ाव सहने के क़ाबिल होते हैं। इसलिए सामान्य बाहरी तापमान (लगभग 20° सेल्सियस से 30° सेल्सियस) के बीच कोई भी व्यक्ति अगर सामान्य कपड़े पहने हो और घर के अन्दर आराम से हो, बहुत मेहनत मशक्कत न कर रहा हो तो उसे कोई तकलीफ़ नहीं होगी। क्योंकि सामान्य तापमान वाली परिस्थितियों में शरीर बिना कोई ख़ास इंतज़ाम किए सामान्य आंतरिक तापमान बनाए रख सकता है। यह तापमान बनाने में भोजन से पैदा हो रही ऊर्जा मदद करती है।

लेकिन अगर बाहरी तापमान 20°-22° सेल्सियस से कम या 30°-32° सेल्सियस से ज़्यादा हो तो शरीर को अपने आंतरिक तापमान को 37° सेल्सियस (98.6°F) बनाए रखने के लिए कुछ ख़ास तरीक़े अपनाने पड़ते हैं। जैसे, मान लो तुम ठण्ड के मौसम में दोपहर में कहीं निकले और लौटते-लौटते शाम हो गई। तुमने कोई स्वेटर वग़ैरह भी नहीं रखा साथ में। तो जैसे-जैसे तुम शाम की ठण्डी हवा के संपर्क में आओगे, तुम्हारे बाहरी शरीर का तापमान भी 37° सेल्सियस से नीचे जाने लगेगा। इसे रोकने के लिए शरीर भी लगातार सिहरकर या कँपकँपाकर इस ठण्ड से अपना बचाव करता है। काँपने से माँसपेशियों में जो हरकत होती है उससे अतिरिक्त गर्मी पैदा होती है। यह गर्मी आतंरिक तापमान को वापस सामान्य बनाने में मदद करती है।

ठण्ड लगने पर जैसे कँपकँपी ताप नियंत्रण का काम करती है, वैसे ही गर्मियों में पसीना ताप नियंत्रण का काम करता है। गर्मी की दोपहर को अगर हम धूप में खड़े हो जाएँ तो हमें पसीना आने लगता है। यह पसीना शरीर से गर्मी सोखकर उड़ता रहता है (यानी भाप बन जाता है) और शरीर कुछ ठण्डा हो जाता है।

कँपकँपी या ठिठुरना और पसीना आना हमारे

शरीर के तरीक़े हैं, तापमान के बदलाव को सहने के। बाहरी तापमान में घट-बढ़ के बावजूद शरीर के आंतरिक तापमान की स्थिरता को बनाए रखने के। यह प्रक्रिया सिर्फ़ ठण्ड या गर्मी में ही नहीं, पूरे समय हमारे शरीर में चलती रहती है। हर मौसम में, हर पल। पर जब ये तरीक़े काफ़ी नहीं होते तो हम अन्य तरीक़ों का इस्तेमाल करते हैं। गर्मियों में पंखा झलते हैं, पेड़ों की छाँव ढूँढते हैं, बार-बार मुँह-हाथ धोते हैं ताकि ठण्डक मिले। और सर्दियों में स्वेटर पहन लेते हैं या चादर ओढ़ते हैं, धूप या आग सेंकते हैं आदि।

दरअसल जाड़ों में, जब हमारे शरीर का तापमान वातावरण के तापमान से ज़्यादा रहता है तब शरीर अपनी गर्मी लगातार खोता जाता है। इसीलिए ठण्ड लगती है। हमारा शरीर अपनी गर्मी का कितना हिस्सा वातावरण में गँवा देगा यह इस बात पर निर्भर करता है कि शरीर के आंतरिक अंगों और वातावरण के बीच ऊष्मा (गर्मी) के कुचालक पदार्थों की मात्रा कितनी है। यह कुचालकता चमड़ी के कुछ हिस्से से, चमड़ी के नीचे जमी वसा की परत से और चमड़ी के ठीक बाहर बालों में या कपड़े में क़ैद हवा की परत से बनती है। तुमने देखा होगा कि अचानक ठण्डी हवा का झोंका आए तो हमारे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। कई बार हल्की ठण्ड में त्वचा पर दाने भी निकल आते हैं।

शरीर के रोओं का इस तरह खड़े हो जाना काफ़ी मज़ेदार है। इन रोओं के बीच जितनी हवा क़ैद रहती है वह एक कुचालक परत की तरह काम करती है। चूँकि हवा ऊष्मा की कुचालक है, इसलिए जितनी मोटी यह हवा की परत होगी, उतनी ही शरीर की गर्मी शरीर में क़ैद रहेगी, वातावरण में खो नहीं जाएगी। इसलिए जब-जब ठण्ड लगती है तब यह रोयें खड़े हो जाते हैं ताकि उनके बीच फँसी हवा की परत मोटी हो सके। बाल वाले पशु-पक्षी भी इसी तरीक़े से ठण्ड से अपना बचाव करते हैं। चिड़ियाँ इसकी अच्छी उदाहरण हैं। अक़्सर ठण्ड में हम इन्हें शरीर को झटकारकर, रोयें फुलाकर बैठे देख सकते हैं। हम इन्सानों के शरीर के रोयें कम घने होते हैं। इसलिए इस तरीक़े से हमारा काम अधिक देर तक नहीं चलता। हमें जल्दी ही स्वेटर, चादर, कम्बल, रज़ाई आदि की शरण लेनी पड़ती है।

हमारे कपड़े – स्वेटर, चादर आदि भी वही काम करते हैं जो रोयें करते हैं। यानी अपने और शरीर के बीच हवा की परत बनाए रखना। पर इसके साथ ही, कपड़ा खुद ऊष्मा का कुचालक है या नहीं, या उसकी कुचालकता कितनी है, यह बात भी तय करती है कि वह शरीर की गर्मी को कितना बचाकर रख सकता है। जैसे सूती कपड़ों में हवा रोकने की क्षमता कम होती है। ऊनी कपड़ों में चूँकि बुनाई के बीच हवा रोकने की जगह ज़्यादा होती है, इसलिए ये ठण्ड से ज़्यादा बचाव करते हैं। दूसरी ओर सूत की तुलना में ऊन ऊष्मा का बेहतर कुचालक है। इसलिए ऊन का इस्तेमाल सिर्फ़ ठण्ड से बचने के लिए ही नहीं, गर्म इलाक़ों में गर्मी से बचने के लिए भी किया जाता है। क्योंकि तब वह वातावरण की गर्मी को शरीर तक पहुँचने से रोकता है। यही अन्तर हम नंगे पैर लकड़ी के फ़र्श और सीमेंट के फ़र्श पर चलकर भी समझ सकते हैं। दोनों फ़र्श अगर एक ही तापमान पर हों तब भी सीमेंट का फ़र्श ज़्यादा ठण्डा महसूस होता है। क्योंकि सीमेंट में ऊष्मा की चालकता लकड़ी से ज़्यादा है। यानी वह हमारे पैर की गर्मी ज़्यादा आसानी से सोख लेती है।

यानी हम जो आम कपड़ों को कपड़े और ऊनी कपड़ों को 'गर्म कपड़े' कहते हैं, यह ठीक नहीं है, है न। ये ऊनी कपड़े खुद गर्म नहीं होते। इनमें गर्मी के प्रति चालकता कम होती है जिससे ये हमारी गर्माहट को हमीं में बनाए रखते हैं। और अगर इन कपड़ों की बनावट ऐसी हो कि उनमें हवा की अच्छी ख़ासी परत क़ैद हो सके, तो फिर तो सोने पे सुहागा। क्या ख़्याल है? लगता है ठण्ड से बचने के उपाय समझते-समझते हममें काफ़ी गर्माहट आ गई है। और गर्मजोशी भी! तो क्यों न एक कप गर्मागर्म चाय बनाकर पी ली जाए? रही-सही कसर भी जाती रहेगी। ❑

इस लेख में आए चित्र काश्मीर, एक नामीबियाई कहानी तथा कॉन्सेपचुअल फिजिक्स से साभार।

काँटेदार पेड़

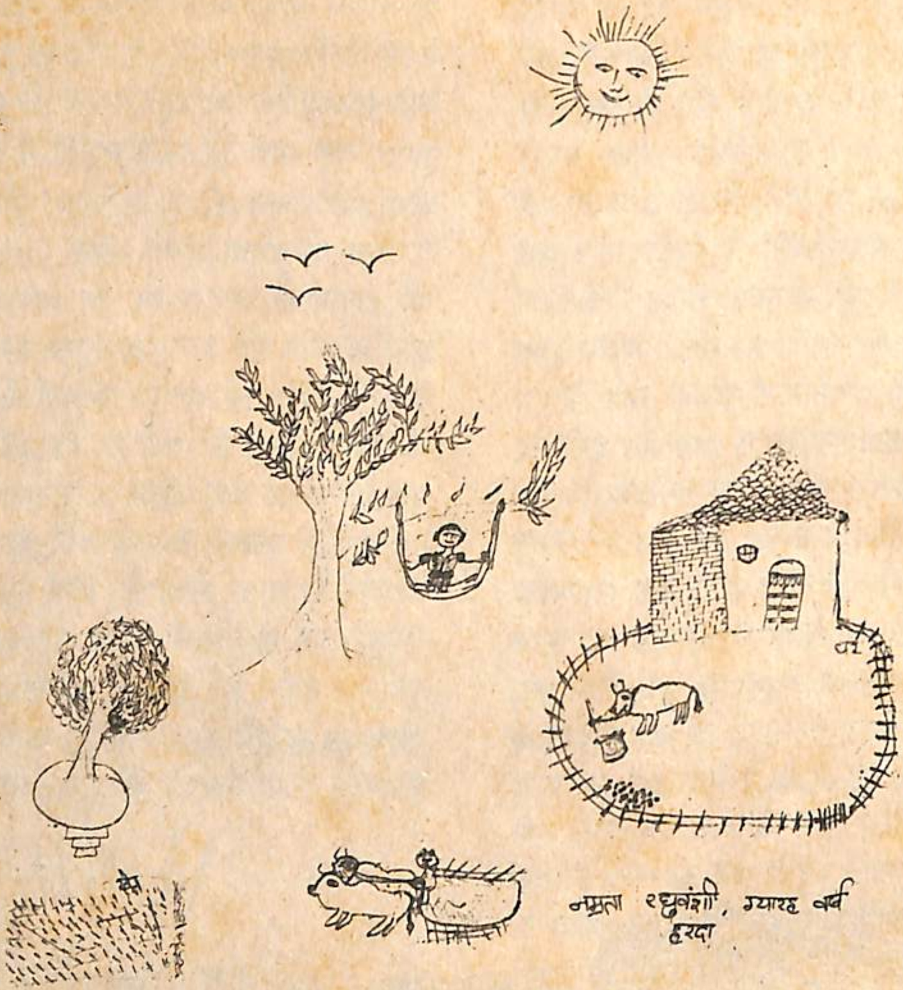

नम्रता रघुवंशी, ग्यारह वर्ष, हरदा, म. प्र.

बहुत पुरानी बात है जब मैं छोटा था। मेरे पड़ोस में मेरा दोस्त रहता था। उसका नाम सचिन था। हम दोनों सात साल के थे। हमारे पड़ोस के आख़िरी छोर पर एक पेड़ था। उस जगह पर कोई नहीं जाता था। वहाँ पर सुनसान रहता था। उसी जगह पर मैं और मेरा दोस्त सचिन छोटा–सा झूला बनाए थे। मेरा दोस्त ठिंगना था। पर उसमें ताक़त थी। एक दिन हम उस झूले पर झूल रहे थे। मेरे दोस्त ने ज़ोर से झूला झुलाया। मैं एकदम से घबरा गया। जिस पेड़ पर झूला था। उसके बाजू में एक बबूल का छोटा–सा पेड़ था। सचिन ने जब एकदम से झूला झुलाया तो जिस पेड़ पर झूला था उस पेड़ से जो बिल्कुल नज़दीक में बबूल का पेड़ था उसमें मैं फँस गया। और मेरे पैर में काँटा चुभ गया। मैं चिल्ला उठा। मेरे दोस्त ने बहुत कोशिश की पर ठिंगना होने के कारण वह निकाल न सका। वह डर के मारे भागा और घर चला गया। मैं वहाँ पर रो रहा था। पर उसने मेरी मम्मी को नहीं बताया कि मैं वहाँ फँस गया हूँ। वह डर गया था। इसलिए उसने किसी को नहीं बताया। मैं रो रहा था। मैंने दूर में देखा मेरे पिन्टू चाचा जा रहे हैं। मैंने उन्हें बुलाया वह मुझे घर ले गए। घर में मेरी मम्मी बहुत डाँटी।

पियूष पशीने, पाँचवीं, अंबागढ़, बस्तर

पंछी

हम हैं पंछी दीवाने
हम हैं पंछी दीवाने
लेकर उड़ते हैं हम
खुशियों के तराने
गाते हैं कोयल पपीहा
बादल देख नाचें
मोर जंगल में
ना क़ैद करो हमको पिंजरे में
हम हैं आज़ाद पंछी
क़ैद करके ना बनो हमारे दुश्मन
हम हैं जंगल की शोभा निराली
ये करते हैं हम फ़रियाद
आज़ाद करो हमको पिंजरे से
हम हैं पंछी दीवाने
हम हैं पंछी दीवाने

रक्षा तिवारी, छठवीं, भादूगाँव, होशंगाबाद, म. प्र.

संजय लिम्बोदिया, तीसरी, पिपलरावाँ, देवास, म. प्र.

हमारी साइकल

साइकल हमारी सबसे प्यारी
इसने हमको दिया सहारा
हर वाहन से है यह न्यारी
सबको लगती कितनी प्यारी
झट से यह हमको कहीं भी
पहुँचाती
सरसर करती भागती जाती
दो चकों की इसकी शान
कोई नहीं है इससे परेशान
दो तीन को बैठाकर ले जाती
बहुत जल्दी अपने घर को
पहुँचाती
जो इसको एक बार चलाए
वह इसे चलाता ही जाए
इतनी तेज़ी से यह भागती
रोको तो यह नहीं रुकती
साइकल हमारी सबसे प्यारी
इसने हमको दिया सहारा

रघुवीर सिंह देवड़ा, नौवीं
छिदगाँव, होशंगाबाद, म. प्र.

राजकुमार शाक्यवार, पाँचवीं, सेमराहाट, गुना, म. प्र.

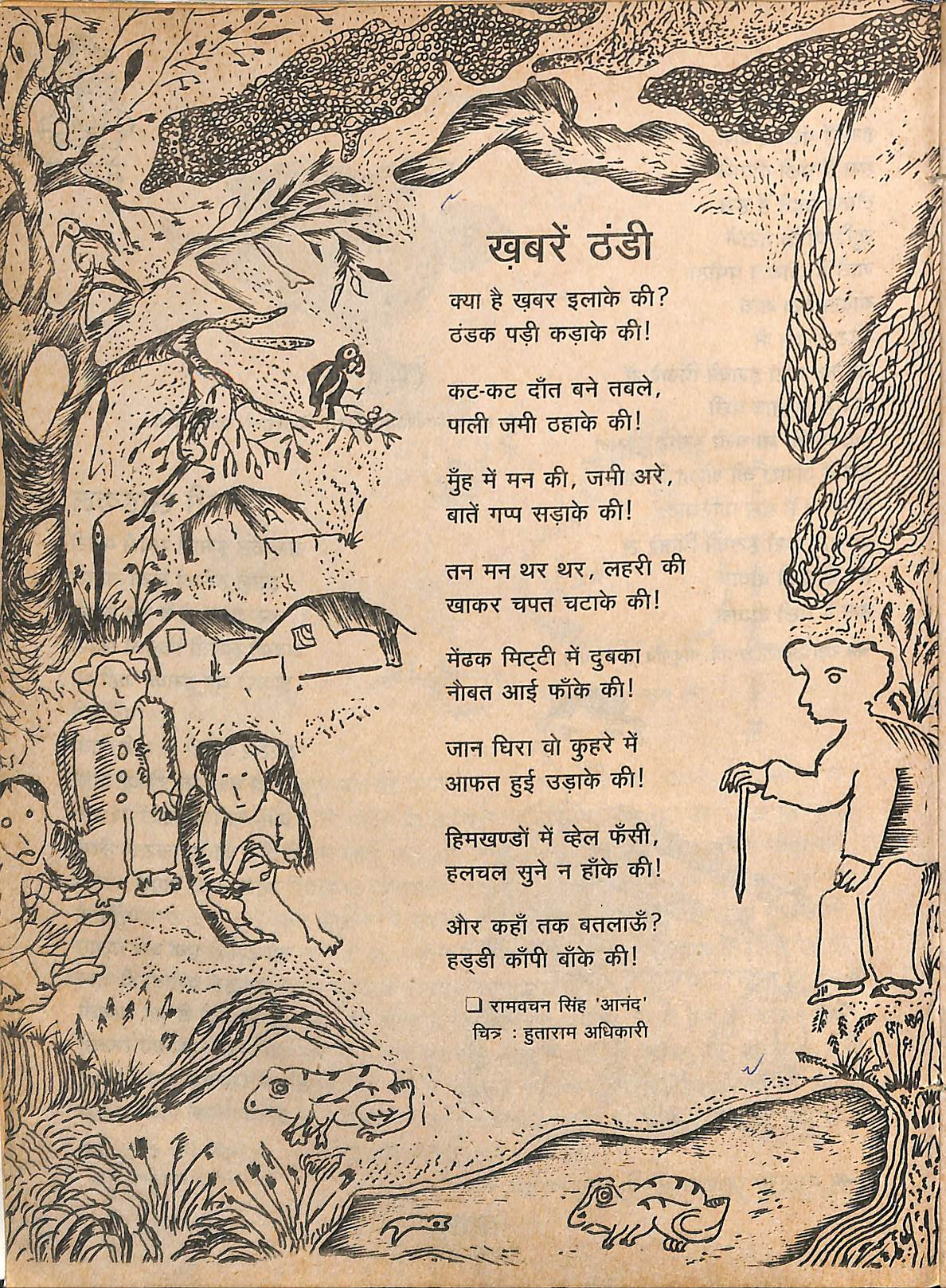

ख़बरें ठंडी

क्या है ख़बर इलाके की?
ठंडक पड़ी कड़ाके की!

कट-कट दाँत बने तबले,
पाली जमी ठहाके की!

मुँह में मन की, जमी अरे,
बातें गप्प सड़ाके की!

तन मन थर थर, लहरी की
खाकर चपत चटाके की!

मेंढक मिट्टी में दुबका
नौबत आई फाँके की!

जान घिरा वो कुहरे में
आफत हुई उड़ाके की!

हिमखण्डों में व्हेल फँसी,
हलचल सुने न हाँके की!

और कहाँ तक बतलाऊँ?
हड्डी काँपी बाँके की!

❑ रामवचन सिंह 'आनंद'
चित्र : हुताराम अधिकारी

स्वतंत्रता संग्राम और छत्तीसगढ़

हमारे देश की आज़ादी के आंदोलन की एक ख़ासियत यह थी कि अंग्रेज़ी राज के पहले से या उसके दौरान आम लोगों के हकों के लिए अत्याचार और शोषण के खिलाफ लड़नेवाले कई सारे अलग-अलग संघर्ष चल रहे थे। और, एक समय पर आकर वे सब अँग्रेज़ी राज की ख़िलाफत में तब्दील हो गए थे। और जब आज़ादी मिली तो संघर्षों का दौर उसके साथ ही समाप्त नहीं हो गया। आम लोगों की समस्याएँ आज़ादी के साथ रातोंरात सुलझ नहीं गईं। इसलिए उनके संघर्ष बाद में भी जारी रहे और आज भी हैं। मालूम नहीं कि यह ख़ासियत हमारे देश की है या और जगहों में भी ऐसी बातें देखने को मिलती हैं। शायद दुनिया भर में, सभी जगह लोगों के जीवन की जद्दोजहद तो लगातार चलती ही रहती है।

खैर, यह भूमिका इसलिए कि इस बार हम मध्यप्रदेश के छत्तीसगढ़ अंचल के एक ऐसे ही संघर्ष के बारे में जानने वाले हैं। यह लड़ाई शुरू तो हुई थी ग़रीब किसानों पर मराठा सैनिकों के जुल्म के ख़िलाफ़। फिर बाद में मुनाफाखोरों और साहूकारों के द्वारा क़र्ज़ के ज़रिए लूटे जाने के विरोध में यह लड़ाई चलती रही। और जब इन्हीं साहूकारों को अँग्रेज़ी राज का संरक्षण और बढ़ावा मिला तो यह संघर्ष अँग्रेज़ी हुकूमत के खिलाफ भी उठ खड़ा हुआ।

वीर नारायण सिंह

छत्तीसगढ़ के रायपुर ज़िले की बलौदा बाज़ार तहसील में सोनाखान नाम का इलाक़ा है। सोनाखान का ज़मींदार परिवार अपनी उदारता और आज़ादी के प्रति प्रेम के कारण जाना जाता था। सन् 1740 में यहाँ मराठों का हमला हुआ। मराठा सैनिकों ने छत्तीसगढ़ में लूट-पाट मचा रखी थी। मराठों ने सोनाखान के ज़मींदार से कई गाँव छीन लिए। ज़मींदार राम राय पर बहुत सारी शर्तें लगा दीं और किसानों पर मनमाने कर लाद दिए। ज़मींदार राम राय ने मराठों की इन नीतियों का कड़ा विरोध किया पर वे जल्दी ही, 1830 में चल बसे। उनकी जगह पर उनके पुत्र नारायण सिंह ने ज़मींदारी सम्भाली।

नारायण सिंह की उम्र उस समय 35 वर्ष की थी। बचपन से ही घर में उन्हें उदारता, आज़ादी पसन्द और वीरता के पाठ मिले थे। इसलिए शुरू से ही वह मराठा राज और उसकी थोपी गई बुरी नीतियों का विरोध करते रहे। उन्होंने छीने गए गाँवों के लिए मराठों से निरंतर संघर्ष किया। इन संघर्षों में नारायण सिंह को जनता का भरपूर समर्थन मिलता था। नारायण सिंह के बारे में कहा जाता है कि वे अपनी उदारता, दानशीलता, संवेदनशीलता आदि के लिए प्रसिद्ध थे ही। पर, इससे भी ज़्यादा वे अपनी वीरता और साहस के लिए जाने जाते थे। सन् 1854 तक इन इलाक़ों में मराठा राज रहा। उसके बाद अंग्रेज़ों का शासन हो गया।

सन् 1856 में इस इलाके में भयानक अकाल पड़ा। नारायण सिंह ने अपने गोदाम का अन्न गरीब किसानों में बाँट दिया। लेकिन सारा गोदाम खाली हो जाने के बाद भी भूखे किसानों की भीड़ बरकरार थी। तब नारायण सिंह ने अँग्रेज डिप्टी कमिश्नर इलियट को सोनाखान के गंभीर संकट के बारे में चिट्ठी लिखी। इलियट ने इस चिट्ठी को अनदेखा कर दिया। सोनाखान के पास के गाँव कसडोल

में माखन नाम के एक व्यापारी के गोदाम में खूब अन्न भरा पड़ा था। नारायण सिंह ने माखन के पास जाकर ग़रीब किसानों के लिए अन्न की माँग की। पर माखन ने यह कहकर बात टाल दी कि वह सिर्फ़ नक़द पैसे के बदले में ही अन्न देगा। जब नारायण सिंह के बहुत मनुहार करने के बाद भी वह नहीं माना तब उन्होंने माखन के गोदाम के ताले तोड़ दिए। फिर सारा अन्न किसान परिवारों में ज़रूरत के मुताबिक बाँट दिया गया।

भीषण अकाल के समय भी जमाखोरी और मुनाफ़ाखोरी करने वाले इस व्यापारी को नारायण सिंह का यह व्यवहार बुरा लगा। उसने अँग्रेज़ डिप्टी कमिश्नर इलियट से नारायण सिंह के विरुद्ध शिकायत की। इलियट पहले से ही नारायण सिंह से ख़फ़ा था। अब उसके शासन में एक व्यापारी का ख़जाना किसानों द्वारा लूट लिया जाए, यह उसके प्रशासन को एक चुनौती थी। उसने नारायण सिंह को गिरफ़्तार करवाया। इल्ज़ाम लगाया कि नारायण सिंह ने माखन व्यापारी की हत्या करने की कोशिश की और उसका गोदाम लूटा। कुछ दिनों तक नारायण सिंह पर रायपुर में मुकदमा चला फिर उन्हें रायपुर जेल में डाल दिया गया।

नारायण सिंह की गिरफ़्तारी और सज़ा की ख़बर से सोनाखान के लोगों में काफ़ी गुस्सा था। पर इस गुस्से को सही दिशा देने वाला वहाँ कोई नहीं था। दूसरी ओर जेल में नारायण सिंह ख़ुद भी अपनी रियाया और अँग्रेजी राज से छुटकारे के बारे में चिंतित थे।

यह 1857 का साल था। इस समय ब्रिटिश फ़ौज के भारतीय सिपाहियों ने पहली बार विद्रोह का रास्ता अख़्तियार किया था। तब रायपुर में भी ब्रिटिश फ़ौज में हिन्दुस्तानी सिपाहियों की एक पलटन थी, जो इन क्रांतिकारी कार्रवाइयों में शरीक थी। इनका नेता हनुमान सिंह था। हनुमान सिंह का संपर्क नारायण सिंह से भी था। इन्हीं लोगों की मदद से नारायण सिंह जेल से सुरंग खोदकर भाग निकले।

अँग्रेज़ शासकों के लिए यह एक बड़ा झटका था। उन्हें समझ में आ गया कि सिपाही विद्रोह में अब छत्तीसगढ़ भी शामिल हो गया है। डिप्टी कमिश्नर इलियट ने नागपुर, मद्रास और बंगाल के अफ़सरों को ख़बर भेजी और स्थिति सम्भालने के लिए तुरन्त फ़ौजी मदद की माँग की। दूसरी और सोनाखान की जनता अपने प्रिय नेता को अपने बीच पाकर बहुत उत्साहित थी। तब नारायण सिंह ने आदिवासी किसान युवकों को अंग्रेज़ों के खिलाफ संघर्ष के लिए इकट्ठा करना शुरू किया। वे सभी हथियार इकट्ठा करने और उनको चलाने का प्रशिक्षण लेने में जुट गए। एक डेढ़ महीने की कोशिश में ही लगभग पाँच सौ लोगों की सेना तैयार हो गई। शुरू से ही नारायण सिंह ने अपनी सेना के युवकों को यह स्पष्ट कर दिया था, कि

उनके पास न तो वेतन देने के लिए, न ही हथियार ख़रीदने के लिए रुपए थे। सब कुछ इन सेना के सिपाहियों को खुद ही जुटाना था। सिर्फ़ देश के लिए त्याग की भावना से जो लोग जुड़ना चाहते थे, वे ही जुड़े।

कुछ समय बाद ही पूरे सोनाखान इलाके में अँग्रेज़ी राज से मुक्ति के लिए एक छटपटाहट फैल गई। नारायण सिंह अपने घोड़े पर दिन रात घूम-घूमकर गाँव-गाँव में आज़ादी के बारे में लोगों से बातचीत करते थे। औरतें देशभक्ति के गीत गाते हुए प्रभात फेरियाँ लगाने लगीं। गाँवों की पारम्परिक भजन मंडलियाँ अब देशप्रेम के गीत गाने लगी थीं।

इस पूरे माहौल से परेशान डिप्टी कमिश्नर इलियट ने नारायण सिंह के आज़ादी के संग्राम को कुचलने के लिए लैफ़्टिनेंट स्मिथ के नेतृत्व में एक सेना भेजी। एक दिसम्बर 1857 को स्मिथ की फ़ौज सोनाखानकी सीमा पर पहुँची। सीमा पर नाले के दूसरी ओर से नारायण सिंह के सैनिकों ने अँग्रेज़ फ़ौज पर तीरों की वर्षा कर दी। कई अँग्रेज़ सिपाही मारे गए और बहुत से घायल हो गए। दो घण्टे के घमासान युद्ध के बाद ही अँग्रेज़ों के पाँव उखड़ गए।

नारायण सिंह की सेना ने पास की करूंपाट पहाड़ी पर अपना पड़ाव डाला हुआ था। उसी रात अपनी हार से चिढ़े हुए स्मिथ ने नींद में बेख़बर सोनाखान की बस्ती को चारों ओर से घेरकर आग लगा दी। जान बचाकर भागने की कोशिश करने से पहले ही ढेर सारे बच्चे, बूढ़े और औरतें आग में जल कर ख़त्म हो गए। नारायण सिंह ने यह अग्निकांड कुर्रूपाट की पहाड़ी से देखा। उन्हें और उनकी पूरी सेना को बहुत दुख हुआ। बस्ती के सारे युवक इस सेना में शामिल थे।

दूसरी ओर स्मिथ ने सुबह होने से पहले ही कुर्रूपाट पहाड़ी को तोपों और बन्दूकधारी सैनिकों से घेर लिया। सूरज उगने के साथ ही लड़ाई शुरू हो गई। सुबह 10 बजे तक घमासान लड़ाई हुई। दोनों ओर के कई सैनिक मारे गए। नारायणसिंह की बची-खुची सेना के पास तलवारों के अलावा और कोई हथियार नहीं बचा था। तब भी वे एकजुट होकर तलवारें लेकर आगे बढ़े। पहाड़ी के नीचे उतरते ही इन लोगों को घेरकर अँग्रेज़ों ने बंदी बना लिया। इन्हें रायपुर में इलियट की अदालत में पेश किया गया। नारायणसिंह पर अँग्रेज़ी राज के विरुद्ध युद्ध छेड़ने का आरोप लगाया गया।

लोगों के इस प्रिय नेता को इलियट ने मौत की सज़ा सुनाई। 19 दिसम्बर, 1857 को रायपुर नगर में वीर नारायणसिंह को फाँसी दी गई। जिस जगह उन्हें फाँसी दी गई उसे आज हम जयस्तम्भ चौक के नाम से जानते हैं। इनकी शहादत के बारे में कुछ लोग मानते हैं कि उन्हें चौक में खड़ा करके गोलियों से मारा गया था। और कई जगहों पर ऐसा भी लिखा मिलता है कि उन्हें तोप से उड़ाकर मारा गया। जो भी हो वीर नारायण सिंह का पूरा जीवन ग़रीब किसानों पर होने वाले अत्याचारों के विरुद्ध लड़ते हुए बीता और उसी मकसद के लिए वे शहीद हो गए।

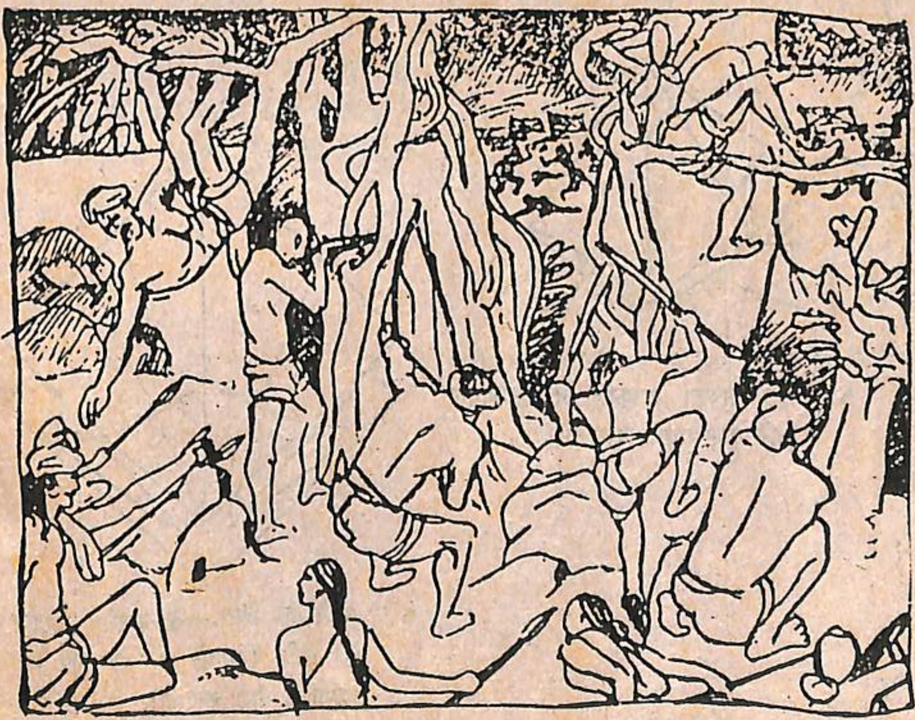

(इस लेख के लिए जानकारी और चित्र 'वीर नारायण सिंह' और 'शहीद वीर नारायण सिंह' पुस्तकों से लिए गए हैं।)

खेल कागज़ का

फूल

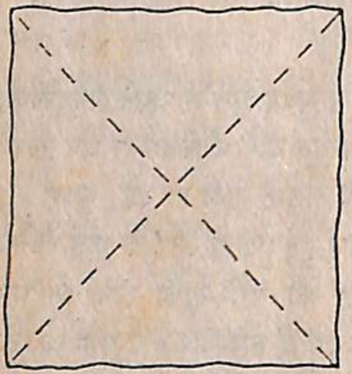

1. एक वर्गाकार कागज़ लो। टूटी रेखाओं पर से मोड़ बनाओ। मोड़ पक्के करके खोल लो। कागज़ को पलट लो।

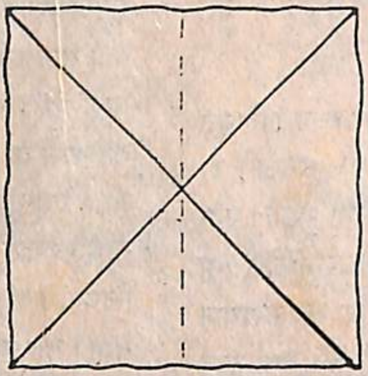

2. टूटी रेखा से मोड़ बनाओ। वापस खोल लो।

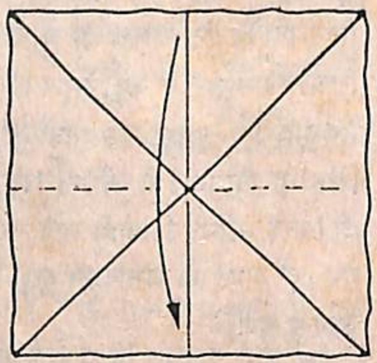

3. टूटी रेखा पर से मोड़ बनाओ।

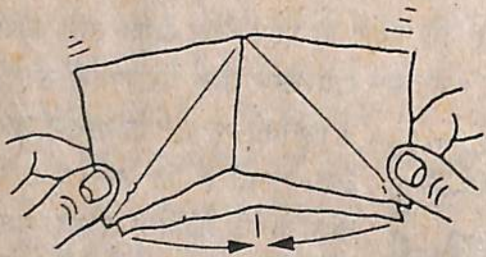

4. चित्र में दिखाए तरीके से आकृति को पकड़कर दोनों सिरों को पास लाओ।

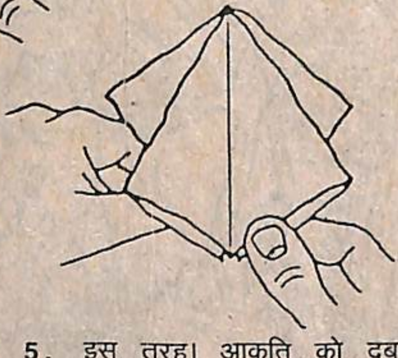

5. इस तरह। आकृति को दबाकर सारे मोड़ पक्के कर लो।

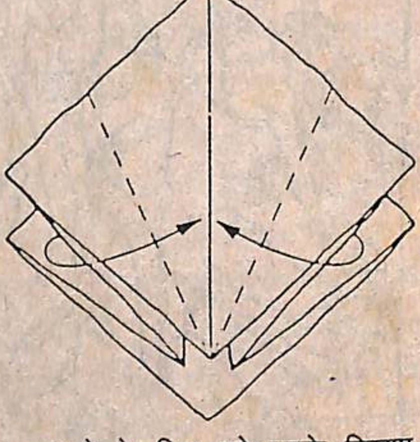

6. आगे के चित्र बड़े करके दिखाए हैं। टूटी रेखाओं पर से तीर की दिशा में मोड़ बनाओ।

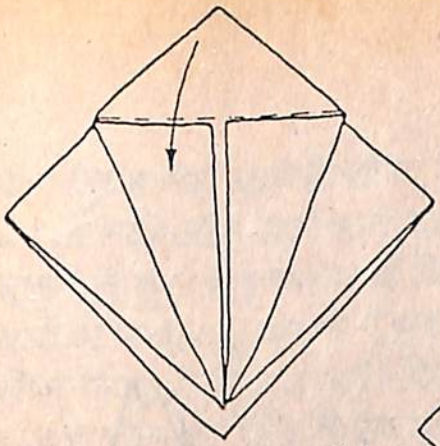

7. चित्र में ऊपर दिख रही टूटी रेखा पर से तीर की दिशा में मोड़ बनाओ।

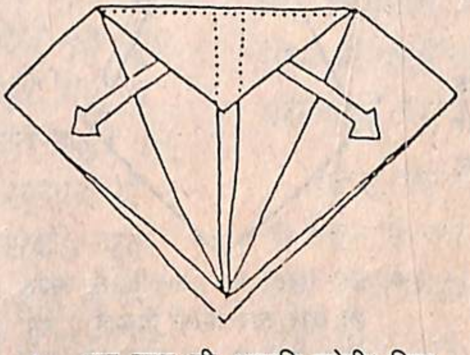

8. इस तरह की आकृति बनेगी। चित्र 6 और 7 में बनाए मोड़ खोल लो।

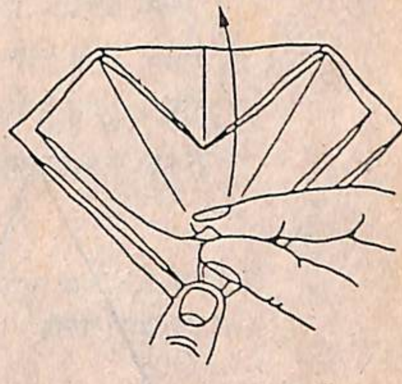

9. अब इस आकृति की ऊपरी सतह पकड़कर तीर की दिशा में ले जाते हुए खोल लो।

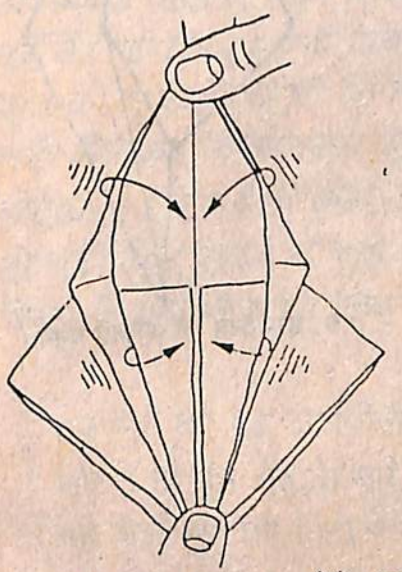

10. इस तरह। अब इस खोले हुए हिस्से को पहले से बने मोड़ के निशानों पर से तीर की दिशा में दबा दो।

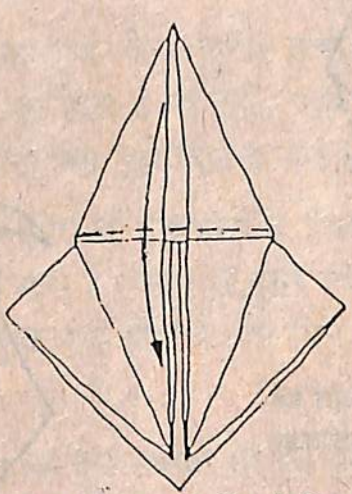

11. टूटी रेखा पर से तीर की दिशा में मोड़ बनाओ।

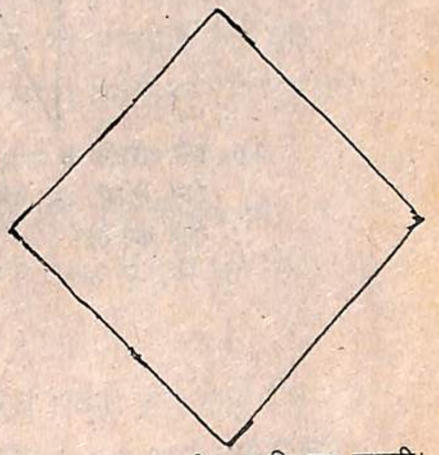

12. इस तरह की आकृति बन जाएगी। आकृति को पलट लो। दूसरी तरफ भी चित्र 6 से 11 तक की क्रियाएँ दोहरा लो।

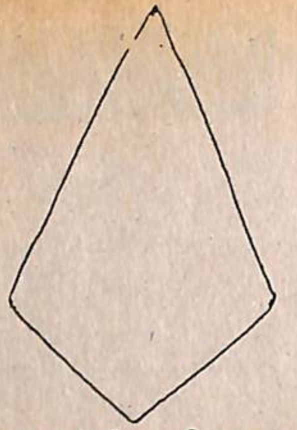

13. इस तरह की आकृति बन जाए तब आगे चलो। आकृति को घुमाकर नीचे का सिरा ऊपर की तरफ कर लो।

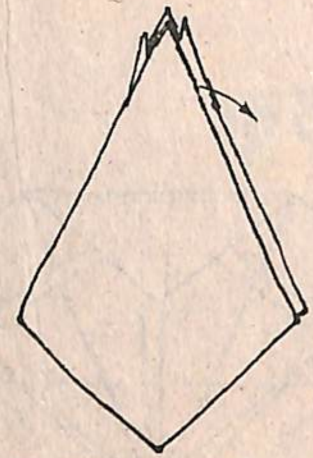

14. इस तरह। इस आकृति में ऊपर की ओर चार हिस्से दिखाई दे रहे होंगे। उनमें से एक हिस्से को तीर की दिशा में वापस खोल लो।

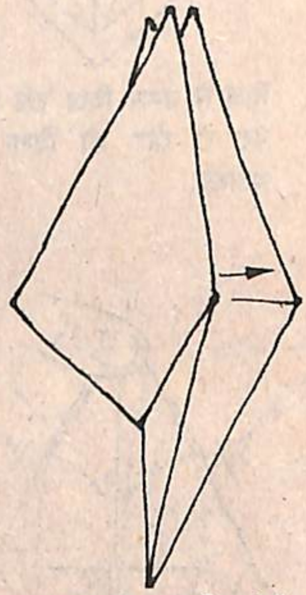

15. इस तरह की आकृति बनेगी।

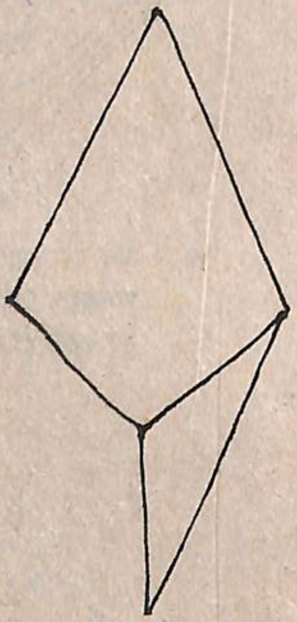

16. इस आकृति के ऊपर की ओर बचे तीन हिस्सों को पेंसिल लपेटकर गोल कर लो।

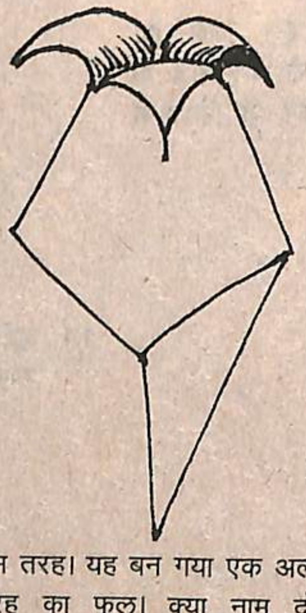

17. इस तरह। यह बन गया एक अलग तरह का फूल। क्या नाम दोगे इसे?

डर

कल सुबह मेरी सहेली सीमा मुझे उसके घर ले गई। और आते-आते शाम हो गई। रास्ते में मुझे भूत मिला। मैं चिल्लाई और वहाँ से भागी। तो रास्ते में एक और भूत मिल गया। मैं फिर चीखी। फिर वह भूत ग़ायब हो गया। फिर मैं समझी कि भूत अब नहीं आएगा। फिर मैं डरते-डरते घर आ गई। सुबह मेरी तबियत ख़राब हो गई। और मैं स्कूल नहीं जा सकी। मुझे डॉक्टर के पास ले गए। फिर मुझे लेकर घर आ गए। मेरे मम्मी पापा ने पूछा कि रात को तू कहाँ गई थी कि तू बीमार हो गई। मैंने कहा मम्मी कल सुबह मैं मेरी सहेली के घर गई थी और आते-आते रात हो गई। फिर रास्ते में मुझे भूत दिखाई दिया। मैं वहाँ से भागी फिर थोड़ी दूर गई फिर रास्ते में मुझे भूत मिल गया। मैं चिल्लाकर फिर भागी फिर भूत ग़ायब हो गया। और घर आई तब बीमार हो गई। फिर मैं कहीं भी जाऊँ रात को घर नहीं आती थी।

फिर मेरे पापा मुझे घुमाने के लिए दिल्ली ले गए। मुझे वहाँ मेरी सहेली वंदना मिल गई। फिर हम मेले गए, मेले से खेलने की चीज़ें लाए। और मेले से आते समय हम बहुत खुश हुए।

तबस्सुम फकीर, टिमरनी,
होशंगाबाद, म. प्र.

तबस्सुम की यह आपबीती पढ़कर तुम्हें कैसा लगा? कहीं तुम भी डर तो नहीं गए? क्या सोचते हो तुम भूत के बारे में? भूत होता है या नहीं? और डर क्यों लगता है? कैसा है यह डर? भूत का होना या न होना पता नहीं कितना सच है, पर डर तो एक हक़ीक़त है।

इस घटना की ही तरह और लोग भी इस तरह के क़िस्से सुनाते हैं कि हमने वहाँ भूत देखा है या ऐसी कोई चर्चा सुनी है। बहुत से दूसरे लोग यह भी मानते हैं कि यह सब हमारा वहम है, भूत-प्रेत कुछ नहीं होता है। पर फिर यह वहम हमारे मन में उपजते कहाँ से हैं?

यह घटना पढ़कर हमें लगा कि तुम सबको भी इसे पढ़वाएँ और इस विषय पर तुम्हारे विचार जानें। अपने विचार हमें लिख भेजो। अगले किसी अंक में इस बारे में विस्तार से बातचीत करेंगे।

इसके अलावा तुम अपने साथ घटी कोई और घटना भी भेज सकते हो। ऐसी कि जिसके बारे में कोई कुछ कहता है तो कोई कुछ। हम सब मिलकर इस तरह की बातों पर विचार करेंगे।

तुम्हारी चकमक

मार पड़ी

हमारे घर के पीछे एक नदी है हम उसमें रोज़ नहाते हैं। एक दिन नदी नहाने हम सब सहेली सुनीता, सोनू, मोनिका जा रहे थे तो मेरी मम्मी मना कर रही थी। मैं बोली कि, 'मैं तो मेरी सहेली के घर जा रही हूँ। भौरे तो मैं नदी पर नहाने गई थी।'

नदी ख़ूब पूर पर थी। मैं डूब गई। उधर से एक नाव आ रही थी उसने मुझे बचाया। हम घर आए तो मेरी मम्मी बोली कि, 'इतनी देर क्यों हो गई?' मैं बोली कि, 'मैं नदी में बह गई थी।' मेरी मम्मी बोली, 'मेरी बात सही निकली।' मेरी मम्मी ने ख़ूब मारा। मैं ख़ूब रोई। तब से मैं नदी पर नहीं जाती हूँ।

पुष्पा वड़खने, टिमरनी, होशंगाबाद, म. प्र.

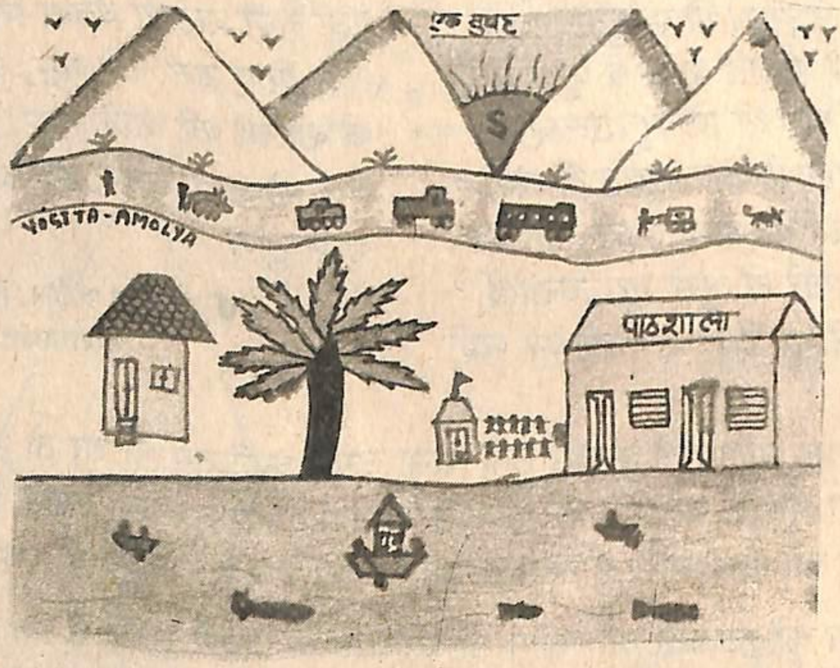

योगिता अमोल्या, खण्डवा, म. प्र.

पहेलियाँ

खुली रात में पैदा होती
हरी घास में सोती
मोतियों सी सूरत है
बादलों की पोती

सब लोगों का साथी सच्चा
पूरे घर की करता रक्षा
नाम है क्या मेरा तुम बोलो
घर आओ तब मुझको खोलो

राजेन्द्र कुमार, देथली बुजुर्ग, मन्दसौर, म. प्र.

हरा हूँ पत्ता नहीं
पालतू हूँ कुत्ता नहीं
नकलची हूँ बन्दर नहीं
बूझो तो मेरा नाम सही

जिसको पाए उसको काटे
है ये पूरा हत्यारा
उसको जेल न फाँसी होती
लगता है सबको प्यारा

बोनी श्रीवास्तव, रायगढ़, म. प्र.

सुन्दर फिरकनी

मैंने देखी एक सुन्दर फिरकनी
उसको देख-देखकर सीखा
मैंने एक कागज़ लिया उसको मोड़ा काटा
उसका एक कोना छोड़ा एक कोना मोड़ा
उसमें लकड़ी और कील लगाई
मैं लेकर बाहर गई
फिरकनी हवा में तेज़ी से चली
हमको बहुत सुन्दर लगी
दूर-दूर लेकर भागे हम
हवा में बहुत तेज़ी से चलती जाती
भाग-भागकर थक गए हम
पर वह चलती जाती
रुकने का नाम न लेती

चित्र और कविता : राधा, 17 वर्ष

टिकिट

एक बार जब मैं अपने गाँव कुण्डी से शाहपुर बाज़ार करने गई थी। शाम को वापस लौटते समय मैं एक सरकारी बस में बैठकर वापस आ रही थी। हमारा गाँव अब बस से थोड़ी ही दूर बचा था कि कंडक्टर बोला कि टिकिट वापस दो। मैंने कहा कि क्यों दूँ आख़िर तुमने भी तो मुझसे पैसे लेकर ही टिकिट दिया है। बस में भीड़ थी मेरा हाथ सीट पर था उसी हाथ में टिकिट भी था। वह मेरे हाथ से टिकिट छुड़ाने लगा। मैंने कहा टिकिट लेना है तो मेरे पैसे वापस कर दो। फिर क्या था वह कुछ नहीं बोला। हमारा गाँव आते ही बस रुक गई। मैं उतर रही थी तो वह बोला कि लड़की बड़ी चालू है। मैंने कहा कि सबको बेवकूफ़ समझ रखा है क्या। बस चली गई तो मेरे साथ जितने भी लोग थे सब हँसने लगे। कंडक्टर इसलिए टिकिट वापस लेता है क्योंकि वह शाहपुर से कुण्डी का टिकिट नहीं काटता वह भौंरा का टिकिट काटता है। कुण्डी या मगरडोह से कोई बैठता है तो वही टिकिट उन्हें भी दे देता है।

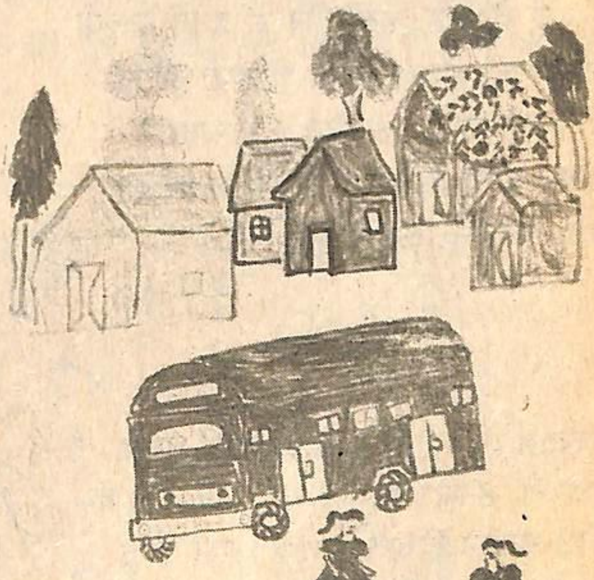

संगीता युवने, दसवीं, कुण्डी, शाहपुर, बैतूल, म प्र.

निर्मला बघेल, नौवीं, (पता नहीं लिखा)

माथापच्ची

(1)

यहाँ चार तरह से उलझी हुई रस्सियाँ दी गई हैं। अगर हम इनके दोनों छोर पकड़कर खींचें तो दो रस्सियों में तो गठान पड़ जाएँगी, पर दो में नहीं पड़ेंगी। इन्हें ध्यान से देखकर यह बताना है कि किन रस्सियों में गठान पड़ जाएँगी।

(2)

नन्दू अपनी अम्मा के साथ बाज़ार जा रहा था। चलते-चलते उसने देखा कि उसके तीन क़दम उसकी अम्मा के दो क़दमों के बराबर आते थे। उसने चलते-चलते ही अम्मा के बाएँ पैर के साथ-साथ अपना बायाँ पैर रखा और यह देखने लगा कि कितने क़दम बाद उनके बाएँ पैर फिर मिलते हैं। क्या तुम बता सकते हो? क्या तुम यह भी बता सकते हो कि नन्दू के कितने क़दम चलने पर उन दोनों के दाहिने पैर मिलेंगे?

(3)

रामदीन जब अकेला अपनी झोपड़ी बनाता है तो सारा काम 10 दिन में निपटा देता है। हल्केवीर से इतनी जल्दी काम नहीं होता। उतनी ही बड़ी झोपड़ी बनाने में उसे 15 दिन लग जाते हैं। अगर दोनों मिलकर झोपड़ी बनाएँ तो काम कितने दिन में पूरा होगा?

(4)

इस *वक़्त ठीक मध्यरात्रि है और बाहर तेज़ बारिश हो रही है। क्या तुम मौसम की भविष्यवाणी करके बता सकते हो कि अब से 72 घंटे बाद धूप खिलेगी कि नहीं?*

(5)

बरसात के महीनों में और उसके तुरन्त बाद भी, हमारे आसपास हमें कई तरह के कीड़े-मकोड़े दिखते रहते हैं। यहाँ भी उनमें से कुछ कीड़े रेंग रहे हैं। ये सब एक ख़ास गुणधर्म वाला समूह बनाते हैं, सिवाय एक के। उस एक को ढूँढ निकालो।

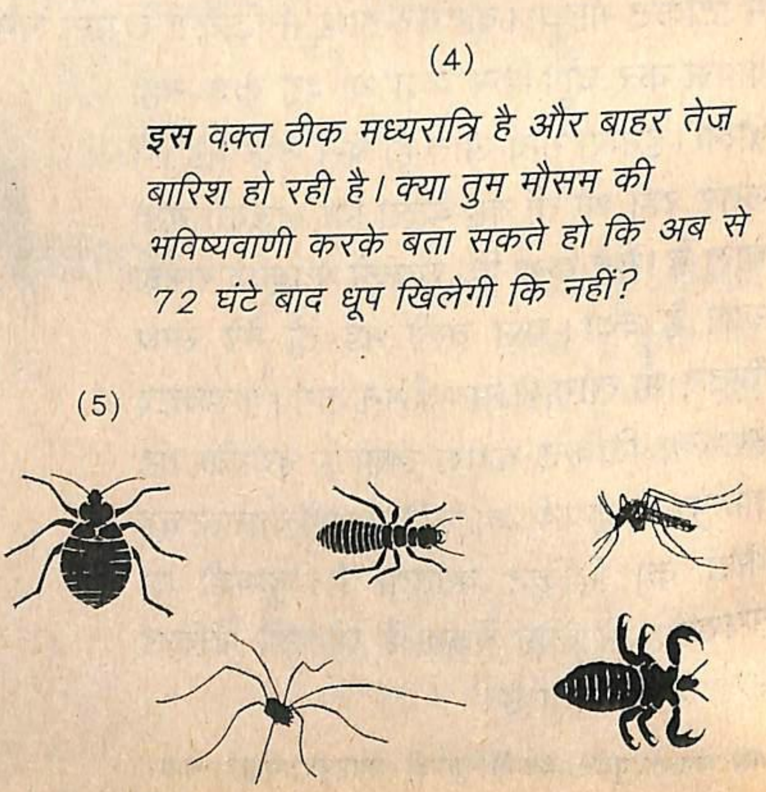

(6)

मनकू के पिताजी की उम्र मनकू की उम्र से 4गुना ज़्यादा है। और तीस साल बाद मनकू अपने पिताजी की आधी उम्र का होगा। तो आज क्या है उन दोनों की उम्र?

(7)

1 से लेकर सौ के बीच में अंक 5 कितनी बार आता है?

(8)

अंतरिक्ष की यात्रा पर गए एक यान से एक यात्री ने अपनी एक सनसनीखेज़ खोज के बारे में धरती के नियंत्रण कक्ष को सूचित किया। दोनों के बीच में बेतार के ज़रिये ये बातचीत हुई –

''सर मैं अंतरिक्षयान य ज म 3368 से रहमत बोल रहा हूँ। सर हमें अपनी आकाशगंगा के एक किनारे पर एक ऐसे सौरमण्डल का पता चला है जिसके कुछ ग्रहों में जीवन के आसार नज़र आ रहे हैं।''

''मैं धरती के भारत स्टेशन 6470 से गजानन खरे बोल रहा हूँ। भई बधाई हो! क्या लगता है, इस सौरमण्डल में कुल कितने ग्रह हैं?''

''अनुमान है कि 12 या 13 ग्रह हैं कुल।''

''और कितने में जीवन की गुंजाइश है?''

''लग रहा है कि पहले पाँच में से तीन में जीवन है।''

''आप लोग पहले किस ग्रह का अध्ययन करने वाले हैं?''

''सर, कल सुबह पाँचवें ग्रह की ओर रवाना हो जाएँगे।''

''अच्छा। मैं सोच रहा था कि क्या पाँचवें ग्रह का जीवन भी कार्बन पर आधारित होगा?''

''पर सर आपको कैसे पता चला कि पाँचवाँ ग्रह उन दो में से नहीं है जिनमें जीवन के आसार नहीं?''

''तुम्हारी बातों से और कैसे! ख़ैर, आगे के काम के लिए शुभकामनाएँ। ओवर।''

''शुक्रिया सर! ओवर।''

और बेतार फ़ोन बन्द करके रहमत मियाँ सोचने लगे कि उनकी कौन-सी बात से यह ज़ाहिर हो गया था कि पाँचवाँ ग्रह उनमें से था जिनमें जीवन की गुंजाइश थी? तुम बातचीत को एक बार फिर से पढ़ो और सोचकर बताओ।

(9)

यह घड़ी नहीं, घड़ी का चित्र है। चित्रकार ने अनमनेपन में इनमें कुछ ग़लतियाँ छोड़ दी हैं। पाँच ग़लतियाँ तो तुम्हें ढूँढ ही लेनी हैं। और ज़्यादा भी ढूँढ लो तो हमें बताना।

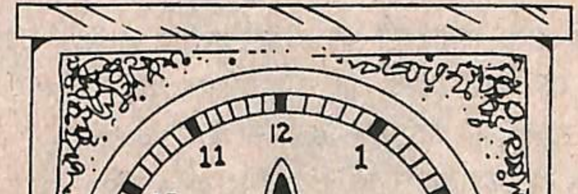

पूस की रात

❑ प्रेमचन्द

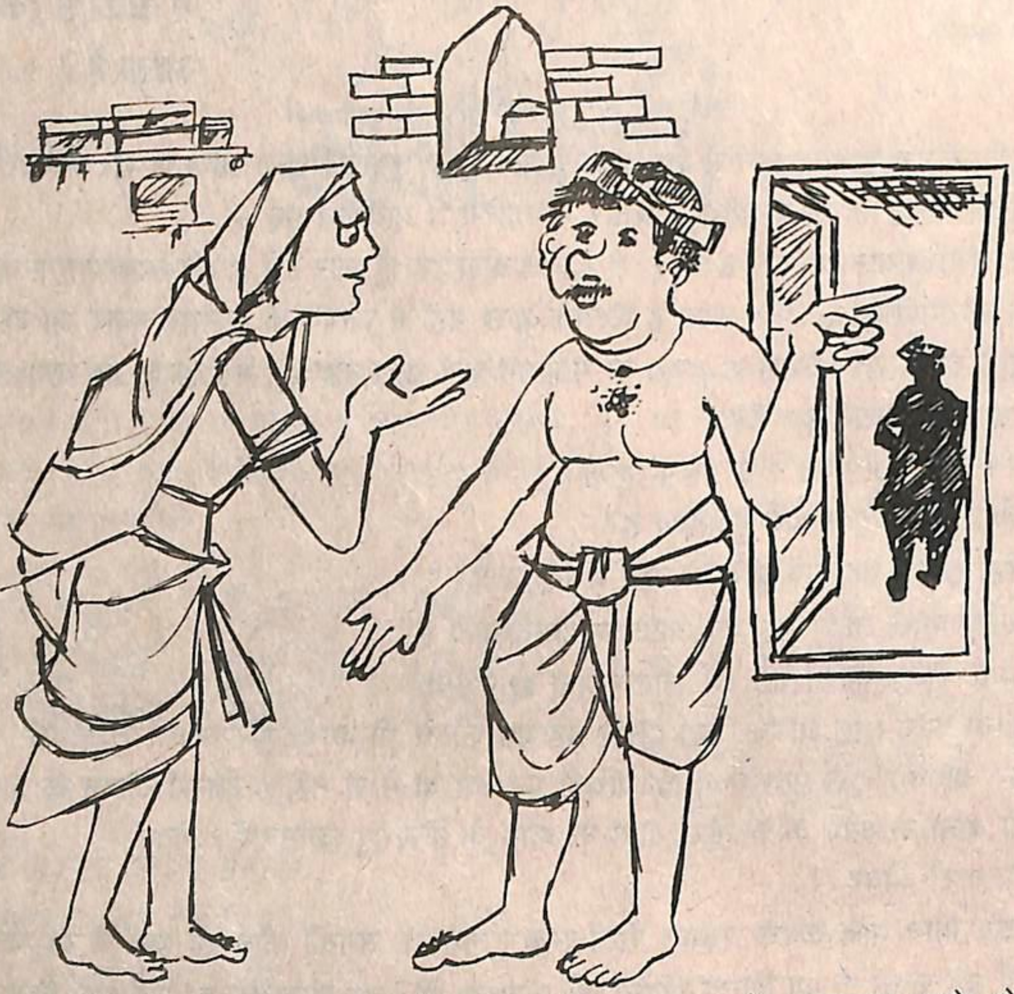

हल्कू ने आकर स्त्री से कहा, "सहना आया है, लाओ, जो रुपए रखे हैं, उसे दे दूँ, किसी तरह गला तो छूटे।"

मुन्नी झाडू लगा रही थी। पीछे फिरकर बोली, "तीन ही तो रुपए हैं, दे दोगे तो कम्मल कहाँ से आवेगा? माघ-पूस की रात हार में कैसे कटेगी। उससे कह दो, फसल पर रुपए दे देंगे। अभी नहीं।"

हल्कू एक क्षण अनिश्चित दशा में खड़ा रहा। पूस सिर पर आ गया, कम्मल के बिना हार में रात को वह किसी तरह नहीं सो सकता। मगर सहना मानेगा नहीं, घुड़कियाँ जमावेगा, गालियाँ देगा। बला से जाड़ों में मरेंगे, बला तो सिर से टल जाएगी। यह सोचता हुआ वह अपना भारी-भरकम डील लिए हुए (जो उसके नाम को झूठ सिद्ध करता था) स्त्री के समीप आ गया और खुशामद करके बोला, "ला दे दे, गला तो छूटे। कम्मल के लिए दूसरा उपाय सोचूँगा।"

मुन्नी उसके पास से दूर हट गई और आँखें तरेरती हुई बोली, "कर चुके दूसरा उपाय! ज़रा सुनूँ कौन उपाय करोगे? कोई खैरात में दे देगा कम्मल न? न जाने कितनी बाकी है जो किसी तरह चुकने ही नहीं आती। मैं कहती हूँ, तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते। मर-मरकर काम करो, उपज हो तो बाकी दे दो, छुट्टी हुई। बाकी चुकाने के लिए ही तो हमारा जन्म हुआ है। पेट के लिए मजूरी करो। ऐसी खेती से बाज़ आए। मैं रुपए न दूँगी- न दूँगी।"

हल्कू उदास होकर बोला, "तो क्या गाली खाऊँ?"

मुन्नी ने तड़पकर कहा, "गाली क्यों देगा, क्या उसका राज है?"

मगर यह कहने के साथ ही उसकी तनी हुई भौंहें ढीली पड़ गईं। हल्कू के उस वाक्य में जो कठोर सत्य था, वह मानो एक भीषण जन्तु की भाँति उसे घूर रहा था।

उसने जाकर आले पर से रुपए निकाले और लाकर हल्कू के हाथ पर रख दिए। फिर बोली, "तुम छोड़ दो अबकी से खेती। मजूरी में सुख से एक रोटी खाने को तो मिलेगी। किसी की धौंस तो न रहेगी। अच्छी खेती है! मजूरी करके लाओ, वह भी उसी में झोंक दो, उस पर से धौंस।"

हल्कू ने रुपए लिए और इस तरह बाहर चला मानो अपना हृदय निकालकर देने जा रहा हो। उसने मजूरी से एक-एक पैसा काट-कपटकर तीन रुपए कम्मल के लिए जमा किए थे। वह आज निकले जा रहे थे। एक-एक पग के साथ उसका मस्तक अपनी दीनता के भार से दबा जा रहा था।

• • •

पूस की अँधेरी रात! आकाश पर तारे ठिठुरते हुए मालूम होते थे। हल्कू अपने खेत के किनारे ऊख के पत्तों की एक छतरी के नीचे बाँस के खटोले पर अपनी पुरानी गाढ़े की चादर ओढ़े पड़ा काँप रहा था। खाट के नीचे उसका संगी कुत्ता जबरा पेट में मुँह डाले सर्दी से कूँ-कूँ कर रहा था। दो में से एक को भी नींद न आती थी।

हल्कू ने घुटनियों को गर्दन में चिपकाते हुए कहा, "क्यों जबरा, जाड़ा लगता है? कहता तो था, घर में पुआल पर लेट रह, तो यहाँ क्या लेने आए थे। अब खाओ ठण्ड, मैं क्या करूँ। जानते थे, मैं यहाँ हलुआ-पूरी खाने आ रहा हूँ, दौड़े-दौड़े आगे-आगे चले आए। अब रोओ नानी के नाम को।"

जबरा ने पड़े-पड़े दुम हिलाई और अपनी कूँ-कूँ को लम्बी बनाता हुआ एक बार जम्हाई लेकर चुप हो गया। उसकी श्वान-बुद्धि ने शायद ताड़ लिया, स्वामी को मेरी कूँ-कूँ से नींद नहीं आ रही है।

हल्कू ने हाथ निकालकर जबरा की ठण्डी पीठ सहलाते हुए कहा, "कल से मत आना मेरे साथ, नहीं तो ठण्डे हो जाओगे। यह राँड़ पछुआ न जाने कहाँ से बरफ लिए आ रही है। उठूँ, फिर एक चिलम भरूँ। किसी तरह रात तो कटे! आठ चिलम तो पी चुका। यह खेती का मज़ा है! और एक-एक भागवान ऐसे पड़े हैं, जिनके पास जाड़ा जाए तो गर्मी से घबड़ाकर भागे! मोटे-मोटे गद्दे, लिहाफ, कम्मल! मजाल है, जाड़े का गुज़र हो जाए। तक़दीर की खूबी है! मजूरी हम करें, मज़ा दूसरे लूटें!"

हल्कू उठा और गड्ढे में से ज़रा-सी आग निकालकर चिलम भरी। जबरा भी उठ बैठा।

हल्कू ने चिलम पीते हुए कहा, "पियेगा चिलम, जाड़ा तो क्या जाता है, हाँ, ज़रा मन बहल जाता है।"

जबरा ने उसके मुँह की ओर प्रेम से छलकती हुई आँखों से देखा।

हल्कू, "आज और जाड़ा खा ले। कल से मैं यहाँ पुआल बिछा दूँगा। उसी में घुसकर बैठना, तब जाड़ा न लगेगा।"

जबरा ने अगले पंजे उसकी घुटनियों पर रख दिए और उसके मुँह के पास अपना मुँह ले गया। हल्कू को उसकी गर्म साँस लगी।

चिलम पीकर हल्कू फिर लेटा और निश्चय करके लेटा कि चाहे कुछ हो अबकी सो जाऊँगा, पर एक ही क्षण में उसके हृदय में कम्पन होने लगा। कभी इस करवट लेटता, कभी उस करवट, पर जाड़ा किसी पिशाच की भाँति उसकी छाती को दबाए हुए था।

जब किसी तरह न रहा गया, तो उसने जबरा को धीरे-से उठाया और उसके सिर को थपथपाकर उसे अपनी गोद में सुला लिया। कुत्ते के देह से न जाने कैसी दुर्गन्ध आ रही थी, पर उसे अपनी गोद में चिमटाए हुए वह ऐसे सुख का अनुभव कर रहा था, जो इधर महीनों से उसे न मिला था। जबरा शायद समझ रहा था कि स्वर्ग यही है, और हल्कू की पवित्र आत्मा में तो उस कुत्ते के प्रति घृणा की गन्ध तक न थी। अपने किसी अभिन्न मित्र या भाई को भी वह इतनी ही तत्परता से गले लगाता। वह अपनी दीनता से आहत न था, जिसने आज उसे इस दशा को पहुँचा दिया। नहीं, इस अनोखी मैत्री ने जैसे उसकी आत्मा के सब द्वार खोल दिए थे और उसका एक-एक अणु प्रकाश से चमक रहा था।

सहसा जबरा ने किसी जानवर की आहट पाई। इस विशेष आत्मीयता ने उसमें एक नई स्फूर्ति पैदा कर दी थी, जो हवा के ठण्डे झोंकों को तुच्छ समझती थी। वह झटपट उठा और छपरी के बाहर आकर भूँकने लगा। हल्कू ने उसे कई बार चुमकार कर बुलाया, पर वह उसके पास न आया। हार में चारों तरफ दौड़-दौड़कर भूँकता रहा। एक क्षण के लिए भी आ जाता तो तुरन्त ही फिर दौड़ता। कर्तव्य उसके हृदय में अरमान की भाँति उछल रहा था।

एक घण्टा और गुज़र गया। रात ने शीत को हवा से धधकाना शुरू किया। हल्कू उठ बैठा और दोनों घुटनों को छाती से मिलाकर सिर को उसमें छिपा लिया। फिर भी ठण्ड कम न हुई। ऐसा जान पड़ता था, सारा रक्त जम गया है, धमनियों में रक्त की जगह हिम बह रहा है। उसने झुककर आकाश की ओर देखा, अभी कितनी रात बाकी है! सप्तर्षि अभी आकाश में आधे भी नहीं चढ़े। ऊपर आ जाएँगे तब कहीं सबेरा होगा। अभी पहर से ऊपर रात है।

हल्कू के खेत से कोई एक गोली के टप्पे पर आमों का एक बाग था। पतझड़ शुरू हो गई थी। बाग में पत्तियों का एक ढेर लगा हुआ था। हल्कू ने सोचा, चलकर पत्तियाँ बटोरूँ और उन्हें जलाकर खूब तापूँ। रात को कोई मुझे पत्तियाँ बटोरते देखे तो समझे कोई भूत है। कौन जाने कोई जानवर ही छिपा बैठा हो, मगर अब तो बैठे नहीं रहा जाता।

उसने पास के अरहर के खेत में जाकर कई पौधे उखाड़ लिए और उनकी एक झाड़ू बनाकर हाथ में सुलगता हुआ उपला लिए बगीचे की तरफ चला। जबरा ने उसे आते देखा, तो पास आया और दुम हिलाने लगा।

हल्कू ने कहा, "अब तो नहीं रहा जाता जबरूँ! चलो, बगीचे में पत्तियाँ बटोरकर तापें। टाँटें हो जाएँगे, तब फिर आकर सोएँगे। अभी तो रात बहुत है।"

जबरा ने कूँ-कूँ करके सहमति प्रकट की ओर आगे-आगे बगीचे की ओर चला।

बगीचे में खूब अँधेरा छाया हुआ था और अन्धकार में निर्दय पवन पत्तियों को कुचलता हुआ चला जाता था। वृक्षों से ओस की बूँदें टप-टप नीचे टपक रही थीं।

एकाएक एक झोंका मेंहदी के फूलों की खुशबू लिए हुए आया।

हल्कू ने कहा, "कैसी अच्छी महक आई जबरू! तुम्हारी नाक में भी कुछ सुगन्ध आ रही है?"

जबरा को कहीं ज़मीन पर एक हड्डी पड़ी मिल गई थी उसे चिचोड़ रहा था।

हल्कू ने आग ज़मीन पर रख दी और पत्तियाँ बटोरने लगा। ज़रा देर में पत्तियों का एक ढेर लग

गया। हाथ ठिठुरे जाते थे। नंगे पाँव गले जाते थे। और वह पत्तियों का पहाड़ खड़ा कर रहा था। इसी अलाव में वह ठण्ड को जलाकर भस्म कर देगा।

थोड़ी देर में अलाव जल उठा। उसकी लौ ऊपर वाले वृक्ष की पत्तियों को छू-छूकर भागने लगी। उस अस्थिर प्रकाश में बगीचे के विशाल वृक्ष ऐसे मालूम होते थे मानो उस अथाह अन्धकार को अपने सिरों पर संभाले हुए हों। अन्धकार के उस अनन्त सागर में यह प्रकाश एक नौका के समान हिलता, मचलता हुआ जान पड़ता था।

हल्कू अलाव के सामने बैठा आग ताप रहा था। एक क्षण में उसने चादर उतारकर बगल में दबा ली और दोनों पाँव फैला दिए मानो ठण्ड को ललकार रहा हो, 'तेरे जी में जो आए सो कर।' ठण्ड की असीम शक्ति पर विजय पाकर वह विजय-गर्व को हृदय में छिपा सकता था।

उसने जबरा से कहा, "क्यों जब्बर, अब ठण्ड नहीं लग रही है?"

जबरा ने कूँ-कूँ करके मानो कहा, "अब क्या ठण्ड लगती ही रहेगी।"

"पहले से यह उपाय न सूझा, नहीं इतनी ठण्ड क्यों खाते।"

जबरा ने पूँछ हिलाई।

"अच्छा आओ इस अलाव को कूदकर पार करें। देखें, कौन निकल जाता है। अगर जल गए बच्चा, तो मैं दवा न करूँगा।"

जबरा ने उस अग्निराशि की ओर कातर नेत्रों से देखा।

"मुन्नी से कल न कह देना, नहीं तो लड़ाई करेगी।"

यह कहता हुआ वह उछला और उस अलाव के ऊपर से साफ़ निकल गया। पैरों में ज़रा लपटें

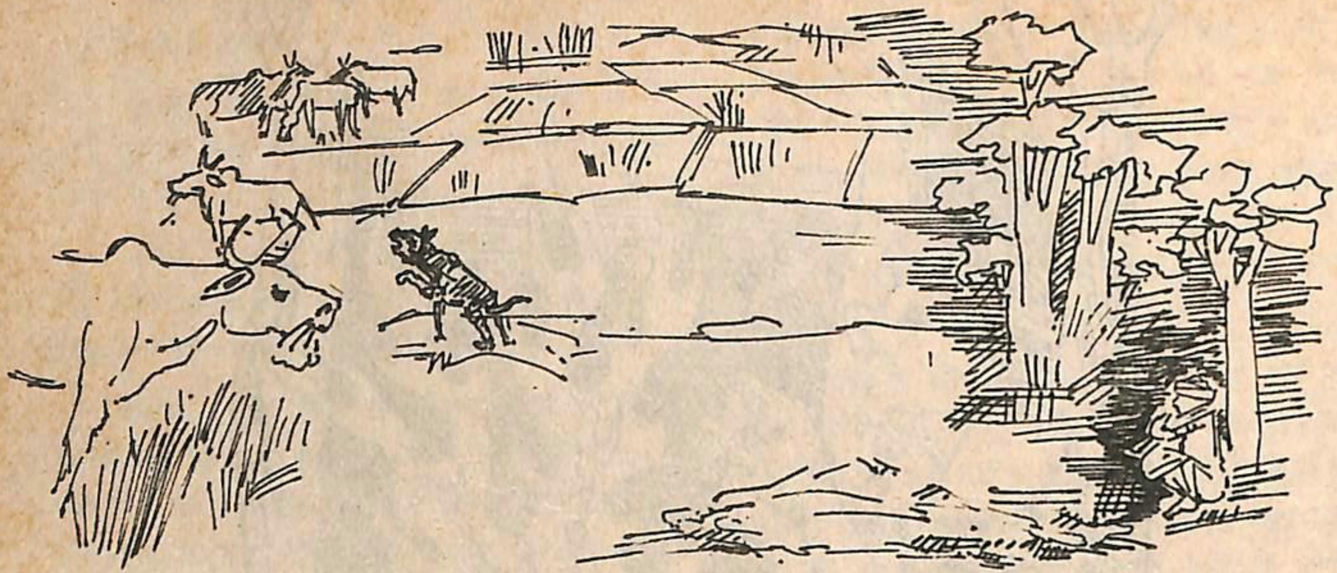

लगीं, पर वह कोई बात न थी। जबरा आग के गिर्द घूमकर उसके पास आ खड़ा हुआ।

हल्कू ने कहा, "चलो-चलो, इसकी सही नहीं। ऊपर से कूदकर आओ।" वह फिर कूदा और अलाव के इस पार आ गया।

पत्तियाँ जल चुकी थीं। बगीचे में फिर अँधेरा छाया था। राख के नीचे कुछ-कुछ आग बाकी थी, जो हवा का झोंका आ जाने पर जाग उठती थी, पर एक क्षण में फिर आँखें बन्द कर लेती थी।

हल्कू ने फिर चादर ओढ़ ली और गर्म राख के पास बैठा हुआ एक गीत गुनगुनाने लगा। उसके बदन में गर्मी आ गई थी, पर ज्यों-ज्यों शीत बढ़ती जाती थी, उसे आलस्य दबाए लेता था।

जबरा ज़ोर से भूँककर खेत की ओर भागा। हल्कू को ऐसा मालूम हुआ कि जानवरों का झुण्ड उसके खेत में आया है। शायद नीलगायों का झुण्ड था। उनके कूदने-दौड़ने की आवाज़ें साफ़ कान में आ रही थीं। फिर ऐसा मालूम हुआ कि वह खेत में चर रही हैं। उनके चरने की आवाज़ चर-चर सुनाई देने लगी।

उसने दिल से कहा, 'नहीं, जबरा होते कोई जानवर खेत में नहीं आ सकता। नोच ही डाले। मुझे भ्रम हो रहा है। कहाँ! अब तो कुछ नहीं सुनाई देता। मुझे भी कैसा धोखा हुआ!'

उसने ज़ोर से आवाज़ लगाई, 'जबरा-जबरा।'

जबरा भूँकता रहा। उसके पास न आया।

फिर खेत के चरे जाने की आहट मिली। अब वह अपने को धोखा न दे सका। उसे अपनी जगह से हिलना ज़हर लग रहा था। कैसे दंदाया हुआ बैठा था। इस जाड़े-पाले में खेत में जाना, जानवरों के पीछे दौड़ना असूझ जान पड़ा। वह अपनी जगह से न हिला।

उसने ज़ोर से आवाज़ लगाई, "हिलो-हिलो! हिलो !! "

जबरा फिर भूँक उठा। जानवर खेत चर रहे थे। फसल तैयार है। कैसी अच्छी खेती थी, पर ये दुष्ट जानवर उसका सर्वनाश किए डालते हैं।

हल्कू पक्का इरादा करके उठा और दो-तीन कदम चला, पर एकाएक हवा का ऐसा ठण्डा, चुभने वाला, बिच्छू के डंक का-सा झोंका लगा कि वह फिर बुझते हुए अलाव के पास आ बैठा और राख को कुरेदकर अपनी ठण्डी देह को गर्माने लगा।

जबरा अपना गला फाड़े डालता था, नीलगायें खेत का सफ़ाया किए डालती थीं और हल्कू गर्म राख के पास शांत बैठा हुआ था। अकर्मण्यता ने रस्सियों की भाँति उसे चारों तरफ से जकड़ रखा था।

उसी राख के पास गर्म ज़मीन पर वह चादर ओढ़कर सो गया।

सबेरे जब उसकी नींद खुली, तब चारों तरफ धूप फैल गई थी। और मुन्नी कह रही थी, "क्या

आज सोते ही रहोगे? तुम यहाँ आकर रम गए और उधर सारा खेत चौपट हो गया।"

हल्कू ने उठकर कहा, "क्या तू खेत से होकर आ रही है?"

मुन्नी बोली, "हाँ, सारे खेत का सत्यानाश हो गया। भला ऐसा भी कोई सोता है। तुम्हारे यहाँ मड़ैया डालने से क्या हुआ?"

हल्कू ने बहाना किया "मैं मरते-मरते बचा, तुझे अपने खेत की पड़ी है। पेट में ऐसा दरद हुआ, कि मैं ही जानता हूँ।"

दोनों फिर खेत की डाँड़ पर आए। देखा, सारा खेत रौंदा पड़ा हुआ है और जबरा मड़ैया के नीचे चित लेटा है मानों प्राण ही न हों।

दोनों खेत की दशा देख रहे थे। मुन्नी के मुख पर उदासी छाई थी, पर हल्कू प्रसन्न था।

मुन्नी ने चिंतित होकर कहा, "अब मजूरी करके माल-गुज़ारी भरनी पड़ेगी।"

हल्कू ने प्रसन्न मुख से कहा, "रात की ठण्ड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा।" □

सभी चित्र : धनजंय

एकलव्य के स्टॉल पर आओ, नई किताबें पाओ

विश्व पुस्तक मेला

दिल्ली में 7 से 14 फ़रवरी, 1998

काग़ज़ की चटाइयाँ

काग़ज़ की चटाई बुनना कैसा रहेगा इस बार। अलग अलग डिज़ाइनों और रंगों के काग़ज़ लेकर सुन्दर रंग बिरंगी चटाइयाँ बना सकते हो। तुम जैसे चाहो वैसे काग़ज़ इकट्ठे कर लो - छींटदार, रंगीन या पत्रिका, अखबार भी ले सकते हो। काग़ज़ के अलावा कैंची, पेंसिल, स्केल आदि तुम अपनी सुविधा से जुगाड़ लो।

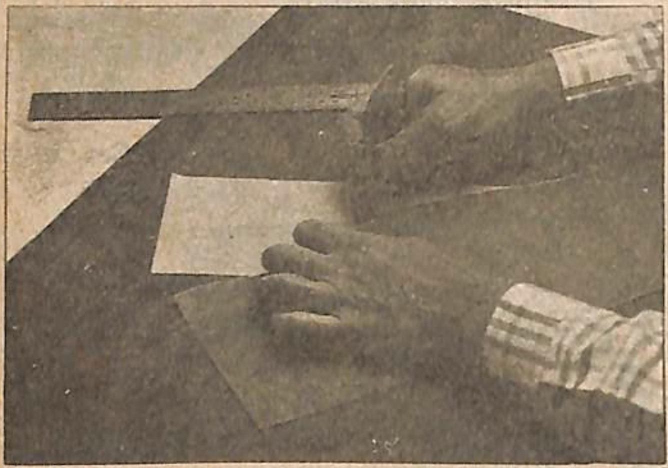

1. पहले तो काग़ज़ की पट्टियाँ काट लो। चाहो तो सीधी-सीधी या किनारों पर से आड़ी-तिरछी। अलग-अलग रंगों की पट्टियों से ज़्यादा सुन्दर चटाई बना सकोगे।

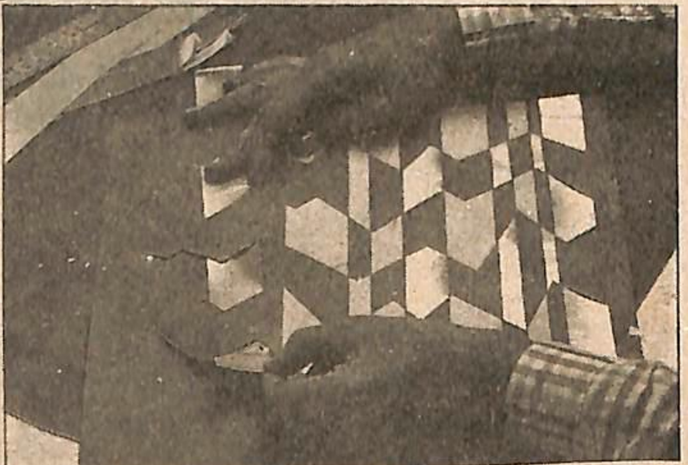

2. चटाई बुनने का एक तरीक़ा तो यह हो सकता है कि काग़ज़ की एक पूरी शीट लेकर उसमें बीच-बीच में कट लगा लो जैसा इस चित्र में दिखाया है। फिर इन कटे हुए हिस्सों में वो पट्टियाँ पिरो दो जो तुमने पहले काटी हैं।

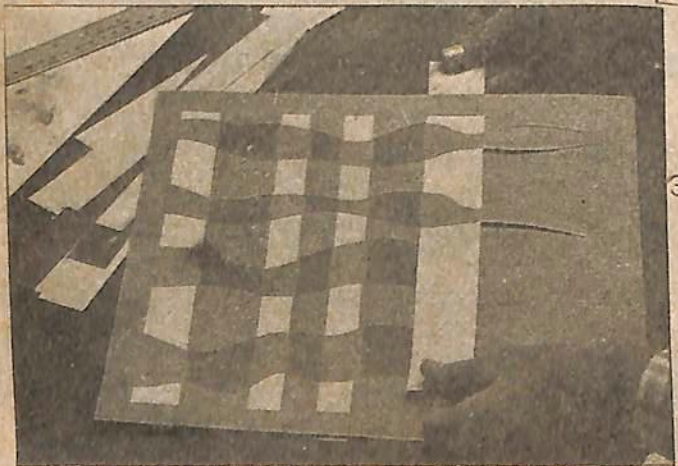

3. पट्टियाँ पिरोने का तरीक़ा तो तुम समझ ही गए होगे। पट्टी को एक कट के ऊपर तो दूसरे के नीचे रखते हुए पिरोना।

4. दूसरा तरीक़ा यह है कि शीट पर पट्टियों को चिपका लिया जाए। पट्टियों को शीट पर सिर्फ़ किनारे पर ही चिपकाना। पहले पट्टियों को एक लाइन में चिपका लो। फिर और पट्टियों को उनके ऊपर-नीचे करके पिरो दो। बाद में उन्हें भी किनारों पर से चिपका दो।

5. यह देखो अलग-अलग डिज़ाइन की चटाइयाँ। तुम थोड़ा सोचकर, तय करके रंग चुनोगे और पट्टियाँ लगाओगे तो ऐसी और कुछ नई डिज़ाइन की चटाइयाँ भी बना सकते हो।

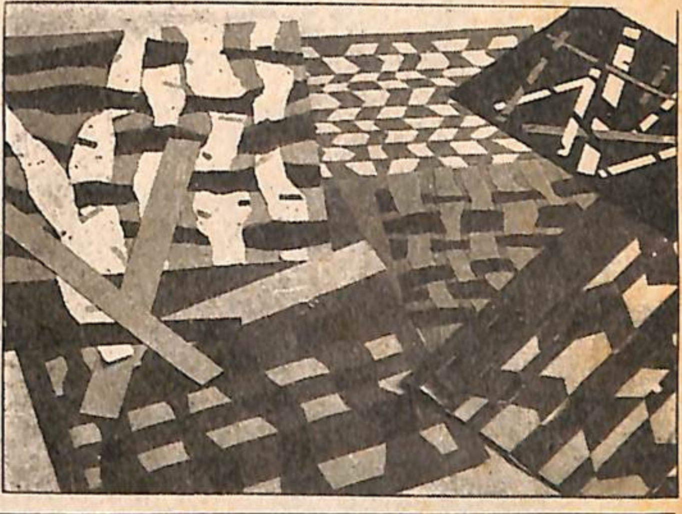

माथापच्ची के हल : नवम्बर, 1997 अंक के

1.

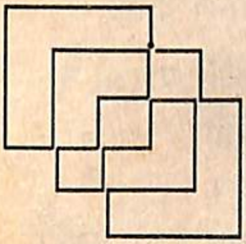

2. साड़ी सौ रुपए की और ब्लाउज का कपड़ा तीस रुपए का था।

3. गोलू 7 नम्बर के चौराहे पर छुपा है।

5. पेज नम्बर 7, 8, 12, 13, और 26 फाड़ने के लिए तीन पन्ने फाड़ने पड़ेंगे।

6.

$$9 - 5 = 4$$
$$\times$$
$$6 \div 3 = 2$$
$$=$$
$$7 + 1 = 8$$

तीन समीकरण तो तुम्हें दिख ही रहे हैं, चौथा समीकरण ऊपर से नीचे की ओर बना है।

7. स्कूल के आसपास की हवा शीशी में भरकर सरोज के घर पहुँचने पर उसमें वहाँ की हवा न मिल जाए, यह सुनिश्चित करने का एक तरीका यह है कि वह स्कूल से चलते समय शीशी में पानी भर ले।

वर्ग पहेली 75 का हल

प्र	मू	ख				न	व	ल
		स	मा	क	ल	न		
स	हा	रा		बी		द	री	चा
म			अ	र	ब			र
झ	ब	ला				व	र	दी
दा			भि	ला	ई			वा
र	क्ष	क		द		म	दा	री
		स	मा	ना	न्त	र		
स	क्ष	म				ता	क	त

वर्ग पहेली - 75 के सर्वशुद्ध हल भेजने वाले पाठक हैं – आभास मुखर्जी, दिल्ली। लालसिंह धनकर, रजोली व शिवकुमारे अंगारे, माहुद, दुर्ग; बद्रीसिंह गहरवार, परसदा व बी. आर. कौशिक, केंदा, बिलासपुर, सभी म. प्र.। इन्हें चकमक का दिसम्बर,97 का अंक उपहार में भेजा जा रहा है।

वर्ग पहेली – 75 में बाएँ से दाएँ संकेत नम्बर 9 की जगह नम्बर 8 और संकेत नम्बर 14 में शब्द संख्या (3) की जगह (2) छप गया था। ग़लतियों के लिए हमें खेद है।

पेड़ का सुख

कुछ साल पहले की बात है
जो आती अब भी याद है।
दूर कहीं से एक बीज आया
उड़कर हवा में

पड़ा रहा कुछ दिन यूँ ही ज़मीन पर
चढ़ गई मिट्टी उसके ऊपर।
वर्षा के पानी से वह भीग गया
दबे दबे मिट्टी में सींच गया

निकला नन्हा–सा पौधा बीज में से
उसके पत्तों को कई बार पशुओं ने खाया
आदमियों ने उसकी डालों को तोड़ा
फिर भी वह नहीं घबराया

चित्र : कविता यादव, सातवीं

चोटों को सहकर वह बढ़ता रहा ऊपर
तीस साल में वह पौधा जवान हुआ।
दुख सहकर आज वह बलवान हुआ
उसके ऊपर चिड़ियों ने घोंसले बनाए

उसकी छाँव में बैठकर पशुओं ने
गर्मियों के दिन बिताए
बैठते चरवाहे आकर
उसकी छाँव में खेलते बच्चे आकर

फिर एक दिन एक आदमी
हाथ में कुल्हाड़ी लेकर आया
मन में यह विचार लाया
अगर इस पेड़ को काटा जाए

कुछ दिनों में ही यह सूख जाए
और जलाऊ लकड़ी मिल जाए
आदमी ने कुल्हाड़ी उठाई और
तीस साल में बना पेड़

दो घंटों में ही काट दिया
चिड़िया रोने लगी
उसके छोटे–छोटे बच्चे गिर पड़े
और खत्म हो गए

सारे के सारे पक्षी इधर–उधर
उड़ने लगे रोने चिल्लाने लगे
बड़ा पेड़ धड़ाम से गिरा ज़मीन पर
वही पेड़ जो खड़ा था

कितना अच्छा लग रहा था
आज ज़मीन पर पड़ा है
देखकर रोना आता
अगर पूछा जाए

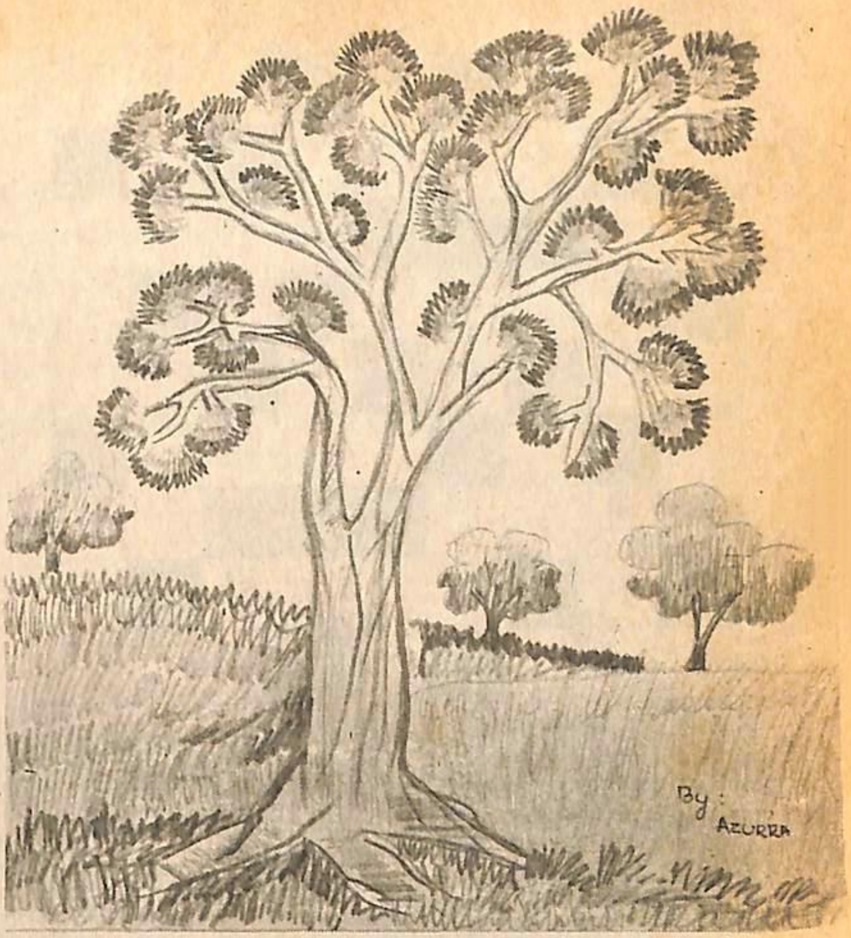

चित्र : अजूरा, आठवीं, कटक, उड़ीसा

पेड़ को काटने से क्या मिला
कि एक पेड़ के कट जाने से

कितने पशु–पक्षी और लोगों को दुख पहुँचा
अगर यह पेड़ होता तो कितना अच्छा होता
आज भी और अब भी
उस पेड़ की याद आती है

दलजीत सिंह सिक्ख, गढ़ी बारोद, शिवपुरी, म.प्र.

चित्र : मुख्तार जुबेर खान, पंधाना, पूर्व निमाड़, म. प्र.

वर्ग पहेली – 78

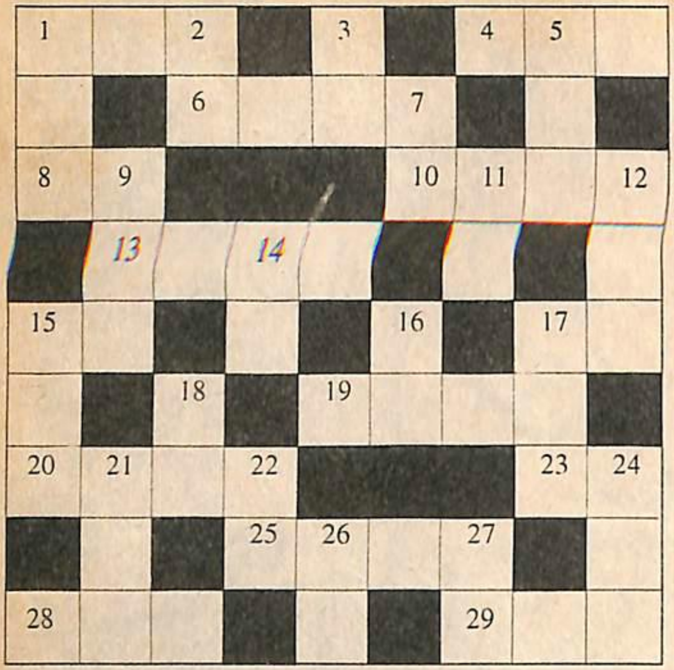

संकेत : बाएँ से दाएँ

1. बचपन और यौवन के बीच की उम्र की लड़की (3)
4. एक प्राचीन भारतीय भाषा (3)
6. अवहेलना (4)
8. .... से मस नहीं होने में एक मुहावरा है (2)
10. नया युवा में ढूँढो हवाई जहाज (2,2)
13. ऐसी बात या घटना जो रोंगटे खड़े कर दे (4)
15. ओहदा, पैर और कविता के अंश भी (2)
17. जीवनदायी तरल (2)
19. चहलपहल की काट-छाँट में हरकत (4)
20. आवाजाही (4)
23. गीली मिट्टी (2)
25. तुम, तुम्हारे माता–पिता, तुम्हारे भाई–बहन आदि (4)
28. जो छोटा हो (3)
29. काजल वाला दर्शन (3)

संकेत : ऊपर से नीचे

1. किरकिरी टकराने में मुकुट है (3)
2. तौर-तरीक़ा (2)
3. आदत (2)
5. किसी से अनुरोध में कहा जाने वाला शब्द (3)
7. वार में है दाना (2)
9. तारों वाला एक साज़ (3)
11. काल या समय (2)
12. सीढ़ी (3)
14. चैत की फ़सल की एक दलहन (2)
15. लकड़ी या पत्थर का चौकोर टुकड़ा (3)
16. लजाने में फँसने का डर है (2)
17. हाथी घोड़ा .... जय कन्हैया लाल की (3)
18. कामयाबी में शरीर है (2)
21. ताज़ा होने का भाव (3)
22. तपस्या (2)
24. तालाबों और जलाशयों के किनारे पाई जाने वाली एक चिड़िया (3)
26. अलमस्त, मनमौजी आदमी (2)
27. धूल (2)

सर्वशुद्ध हल भेजने वालों को चकमक का वह अंक उपहार में भेजा जाएगा जिसमें इस पहेली का हल छपेगा। हल भेजने के लिए वर्ग पहेली की जाली को चकमक से न काटें बल्कि शब्दों को नम्बर डालकर लिख दें।

वर्ग पहेली – 78 का हल मार्च, 1998 के अंक में देखें।

क़िस्सा बुरातीनो का

अब तक तुमने पढ़ा। जूज़ेप नाम के एक बढ़ई को एक बोलने वाला लकड़ी का कुन्दा मिला। जूज़ेप ने वह कुन्दा अपने दोस्त कार्लो को भेंट कर दिया। कार्लो ने कुन्दे को तराशकर कठपुतला बनाया। उसका नाम रखा - बुरातीनो।

अपनी शरारतों के कारण बुरातीनो बिल्ले और लोमड़ी के चंगुल में फँस गया। फिर पुलिस के कुत्ते बुरातीनो को नगर के बाहर गन्दे तालाब में फेंक आए। तालाब के कूबर कछुए ने उसे बचाया और सोने की चाबी दी। सोने की यह चाबी काराबास बाराबास भी पाना चाहता था। इसी चक्कर में काराबास बाराबास तथा बुरातीनो के बीच लुका-छिपी चलती रही।

आख़िरकार बुरातीनो पापा कार्लो से जा मिला। कार्लो, बुरातीनो और उसके साथियों को लेकर घर लौट आया। उधर काराबास बाराबास कार्लो की शिकायत करने कोतवाली की ओर भागा। अब आगे पढ़ो.....

काराबास बाराबास सबको पकड़ने पहुँचा

काराबास बाराबास, जैसा कि हम जानते हैं, कार्लो को गिरफ़्तार करने के लिए उनींदे पुलिसवाले को मना रहा था। पर उसकी चाल बेकार हो गई। निराश होकर वह सड़क पर दौड़ने लगा।

उसकी फहरती दाढ़ी रह-रहकर राहगीरों के बटनों और छातों से उलझ जाती थी। वह धक्का-मुक्की करता हुआ भागता जा रहा था। पीछे-पीछे नन्हे-मुन्ने बच्चों की फौज सीटियाँ बजाती जा रही थी, बच्चे उस पर सड़े अण्डे फेंक रहे थे।

भागता हुआ काराबास बाराबास शहर कोतवाल के पास जा पहुँचा। गर्मी से बेहाल कोतवाल अपने बंगले पर फौव्वारे के पास निकर पहनकर बैठा लेमनेड पीता जा रहा था।

धम-धूसर कोतवाल इतना मोटाा था कि उसकी आधा दर्जन ठुड्डियाँ

निकल आई थीं, फूले-फूले गालों के कारण नाक तो दिख ही नहीं रही थी। चार मनहूस पुलिस वाले उसकी खिदमत कर रहे थे। वे लेमनेड की बोतलें खोल-खोलकर दिए जा रहे थे। और कोतवाल उन्हें गटागट पीता जा रहा था।

कोतवाल के सामने काराबास बाराबास घुटनों के बल गिर पड़ा, दाढ़ी से चेहरे पर बहते आँसू पोंछते हुए रोने लगा, "हुजूर, मैं बेसहारा आदमी हूँ, मुझ पर अत्याचार हुआ है, मेरा सब कुछ लुट गया है, मुझे मारा भी गया है..."

"तुम्हें कौन सता रहा है?" कोतवाल ने पूछा।

"हुजूर, मेरा जानी दुश्मन बुड्ढा कार्लो है। उसने मेरे तीन सबसे अच्छे कठपुतले छीन लिए हैं, वह मेरे मशहूर कठपुतली थियेटर को जला देना चाहता है, अगर उसे गिरफ़्तार नहीं किया गया, तो पूरे शहर में उत्पात मचा देगा, उसे लूट लेगा।"

अपनी बात को सच साबित करने के लिए काराबास बाराबास ने जेब से मुट्ठी भर खनखनाते सोने के सिक्के निकालकर शहर कोतवाल के जूते में घुसेड़ दिए।

बस, उसने ऐसा मायाजाल फैलाया कि कोतवाल डर गया। उसने वहाँ तैनात अपने चारों पुलिसवालों को तुरन्त आदेश दिया। "इस बुजुर्ग बेसहारा आदमी के साथ जाओ और क़ानून के नाम पर जो कुछ ज़रूरी हो बेधड़क कर डालो।"

काराबास बाराबास उन चारों पुलिसवालों को साथ लेकर भागता हुआ कार्लो की कोठरी पर पहुँचकर चिल्लाया, "ताबड़तोड़ राजा के नाम पर इस चोर-उचक्के को गिरफ़्तार कर लो!"

लेकिन दरवाज़ा बन्द था। कोठरी में से किसी ने कोई जवाब नहीं दिया। काराबास बाराबास ने आदेश देते हुए कहा, "ताबड़तोड़ राजा के नाम पर दरवाज़ा तोड़ डालो।"

पुलिसवालों ने ज़ोर लगाया, सड़ा हुआ दरवाज़ा कब्ज़ों समेत उखड़ गया और चारों पुलिसवाले शोर-शराबे के साथ सीढ़ियों के नीचे वाली कोठरी में लुढ़ककर गिर पड़े।

ठीक इसी क्षण कार्लो सिर झुकाकर दीवार में बने चोर दरवाज़े के अन्दर घुस रहा था।

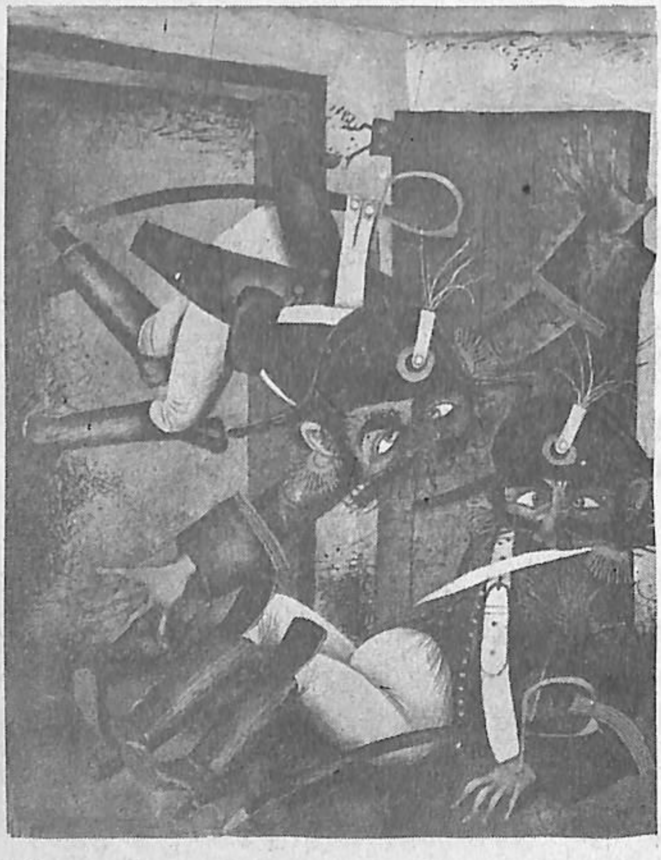

उस चोर दरवाज़े के अन्दर जाने वाला वह आख़िरी आदमी था। दरवाज़ा फिर से उसी तरह खटका और बन्द हो गया। संगीत की धुन अब बन्द हो गई थी। सीढ़ी के नीचे वाली कोठरी में सिर्फ़ गन्दी पट्टियाँ और अलाव के चित्रवाला फटा-पुराना कैनवास छितरा पड़ा हुआ था।

काराबास बाराबास तेज़ी से उछलकर चोर दरवाज़े तक पहुँचा और उस पर बेतहाशा मुक्के बरसाने लगा, ठोकरें मारने लगा, "ठक-ठक-ठक-ठक!"

लेकिन यह दरवाज़ा मज़बूत था। काराबास बाराबास ने थोड़ा पीछे हटकर फुर्ती से एक ज़ोरदार धक्का मारा। लेकिन दरवाज़े पर कोई असर न हुआ।

वह गुस्से में पैर पटकता हुआ पुलिसवालों से कहने लगा, "ताबड़तोड़ राजा के नाम पर - तोड़ दो इस मनहूस दरवाज़े को।"

पुलिसवालों में पहले ही किसी की नाक टूट गई थी तो किसी के सिर पर गुमटा निकल आया था।

"नहीं, यह काम बहुत भारी है," उन्होंने कहा और कोतवाल के पास चल पड़े यह बताने के लिए कि क़ानून के नाम पर जो ज़रूरी था, वह सब उन्होंने किया, लेकिन बूढ़े कार्लो की मदद शायद खुद शैतान ही कर रहा था, क्योंकि वह दीवार के उस पार ओझल हो गया था।

काराबास बाराबास खीझकर अपनी दाढ़ी नोचने लगा, कोठरी में ही लुढ़क-पुढ़ककर चीखने-चिल्लाने लगा।

रहस्यमय दरवाज़े के पीछे क्या मिला

इधर काराबास बाराबास पागलों की तरह लुढ़क-पुढ़क रहा था, अपनी दाढ़ी नोचे जा रहा था, उधर आगे-आगे बुरातीनो, उसके पीछे-पीछे मलवीना, पियेरो, आर्तेमोन और सबसे पीछे पापा कार्लो, तहखाने में पत्थर की ऊँची-ऊँची सीढ़ियों से उतर रहे थे।

पापा कार्लो के हाथ में एक अधजली मोमबत्ती थी। उसकी कँपकँपाती लौ का प्रकाश आर्तेमोन के झबरे बालों वाले सिर या पियेरो के फैले हुए हाथ

की बड़ी-बड़ी परछाइयाँ बना रहा था, लेकिन सीढ़ियाँ अन्धेरे में किधर ले जा रही थी, यह नहीं दिख रहा था।

बुरातीनो सबको पीछे छोड़ता हुआ बहुत आगे निकल चुका था, उसकी सफ़ेद टोपी नीचे मुश्किल से दिख रही थी।

अचानक वहाँ किसी की फुफकार सुनाई दी, कोई कूदा, फिर लुढ़कने लगा। चीख-पुकार सुनाई दी, "बचाओ, बचाओ!"

क्षण भर के लिए आर्तेमोन अपने ज़ख्मों को भूलकर मलवीना और पियेरो को धकेलता हुआ काले बवण्डर की तरह नीचे सीढ़ियों पर दौड़ पड़ा।

उसके दाँत किटकिटाए और कोई जीव ज़ोर से कराह उठा।

फिर पहले की तरह सन्नाटा छा गया। सिर्फ़ मलवीना का दिल अभी भी घड़ी की तरह तेज़ी से टिक-टिक करता हुआ धड़क रहा था।

अचानक रोशनी की एक चौड़ी-सी धारी सीढ़ियों पर पड़ी। पापा कार्लो की मोमबत्ती का प्रकाश फीका पड़ गया।

"देखिए, देखिए, जल्दी!" बुरातीनो ने ज़ोर से पुकारा।

नीचे घुमावदार सीढ़ी के मुहाने पर आर्तेमोन बैठा था। उसके पैरों के पास चूहा खुटरखुटर मरा पड़ा था।

बुरातीनो अपने दोनों हाथों से उस सड़े-गले नमदे के परदे को उठा रहा था जो दीवार में बने एक सूराख को ढँके हुए था। सूराख से नीला प्रकाश भीतर आ रहा था।

सूराख से गुज़रते वक़्त उन्होंने देखा कि यह चमकते सूर्य का प्रकाश है। यह रोशनी कमरे की मेहराबदार छत पर बने गोलाकार रोशनदान से आ रही थी।

थिरकते धूल कणोंवाले किरण-पुंज से पीले संगमरमर का गोलाकार कमरा जगमगा रहा था। उसके बीचोंबीच एक बहुत सुन्दर कठपुतली थियेटर बना हुआ था। रंगमंच के परदे पर बिजली कड़कने की आड़ी-तिरछी सुनहरी रेखाएँ बनी हुई थीं।

परदे के अगल-बगल दो चौकोर मीनारें इस ख़ूबसूरती से सजाई गई थीं, जैसे उन्हें छोटी-छोटी ईंटों से बनाया गया हो। उन मीनारों के हरी टीनवाले गुम्बद चमचमा रहे थे।

बाईं मीनार पर घड़ी लगी हुई थी जिसकी सुइयाँ काँसे की बनी हुई थीं। डायल पर हरे अंक के सामने हँसते-खिलखिलाते बच्चों के चेहरे अंकित थे।

दाईं मीनार पर रंग-बिरंगे शीशेवाली गोल-गोल खिड़की बनी हुई थी।

इस खिड़की के ठीक ऊपर हरी चमकीली छत पर बोलने वाला झींगुर बैठा आराम कर रहा था। जब वे सभी आश्चर्य से मुँह बाए इस अद्भुत थियेटर को देख रहे थे, तब झींगुर ने धीमे किन्तु स्पष्ट स्वर में कहा, "देखो, बुरातीनो, मैंने पहले ही तुम्हें सचेत कर दिया था कि तुम्हारी ज़िन्दगी में बड़े-बड़े ख़तरनाक मोड़ और तरह-तरह की मुसीबतें आएँगी। यह तो अच्छा हुआ कि तुमने उन मुसीबतों से छुटकारा पा लिया। लेकिन इसका अन्त बुरा भी हो सकता था....।"

झींगुर बुढ़ापे के कारण धीरे-धीरे बोल रहा था और वह नाराज़ भी था, क्योंकि उसे सिर पर हथौड़ी की चोट अब भी याद थी। अपनी सौ साल की उम्र और दयालु स्वभाव के बावजूद वह उस अपमान को न भूल पाया था। इसलिए अधिक कुछ कहे-सुने बिना उसने अपनी मूँछें हिलाईं, जैसे कि उनसे धूल झाड़ी हो और धीरे से किसी सुनसान दरार की ओर बढ़ गया।

तब पापा कार्लो ने कहा, "मैंने तो सोचा था यहाँ हमें सोने-चाँदी का ढेर मिलेगा, पर यहाँ तो पुराने खिलौने ही हाथ लगे।"

वह मीनारवाली घड़ी के पास आया, फिर उसने डायल को अपने नाखून से ठकठकाया। और चूँकि घड़ी के बगल में खूँटी पर ताँबे की चाबी टँगी हुई थी, उसने उसे उतारा और घड़ी में चाबी भर दी...।

घड़ी ज़ोर से टिक-टिक करती हुई चल पड़ी, उसके डायल पर सुइयाँ घूमने लगीं। घड़ी की बड़ी सुई बारह पर जा पहुँची और छोटी छह पर। घड़ी के अन्दर कुछ घुरघुर, कुछ खड़खड़ हुई और उसने टनाकेदार आवाज़ के साथ छह बजाए।

तुरन्त ही दाईं मीनार पर रंग-बिरंगे शीशों वाली खिड़की खुली, चाबी की चिड़िया फुदककर बाहर आई और उसने अपने पंख फड़फड़ाए, फिर लगातार छह बार चहकी।

चिड़िया अपनी खिड़की में वापस लौट गई। खिड़की बन्द होने की आवाज़ सुनाई दी और मोहक संगीत गूँजने लगा।

(अगले अंक में जारी)

(सोने की चाबी - क़िस्सा बुरातीनो का' से साभार। लेखक : अलेक्साई तोलस्तोय। सभी चित्र : अलेक्सान्द्र कोश्किन।)

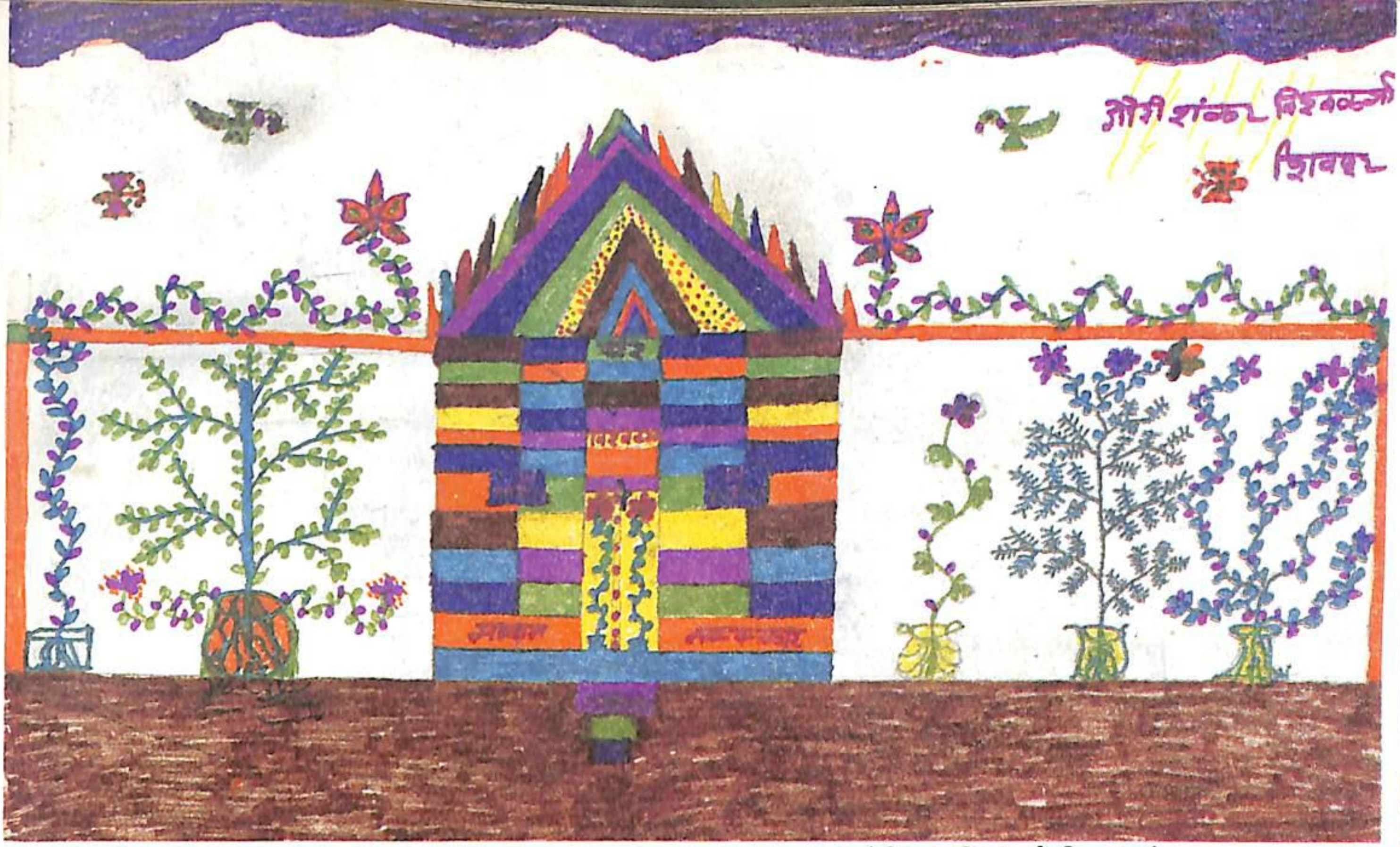

गौरीशंकर विश्वकर्मा, शिवपुर, होशंगाबाद, म.प्र.

अर्पण, तीसरी, एलिनाबाद, सिरसा, हरियाणा

चकमक पंजीयन क्रमांक 50309/85 के अंतर्गत भारत के समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत। डाक पंजीयन क्रमांक BPL/DN/MP/431/97

स्वाति ठाकुर, दस वर्ष, दमोह, म.प्र.

रेक्स डी रोज़ारियो की ओर से विनोद रायना द्वारा राजकमल ऑफसेट प्रिन्टर्स, भोपाल से मुद्रित एवं एकलव्य, ई-1/25, अरेरा कालोनी, भोपाल-462 016 से प्रकाशित।
संपादक : विनोद रायना